संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ७४
फरवरी १९९९

हिन्दी

श्री रामेश्वर (सेतुबंध-तमिलनाडु)

श्री मल्लिकार्जुन (श्रीशैल पर्वत)

श्री नागेश्वर (दारुका वन)

श्री विश्वेश्वर (वाराणसी)

श्री भीमशंकर (डाकिनी-महाराष्ट्र)

श्री त्र्यंबकेश्वर (गौतमी तट)

श्री वैद्यनाथ (परली)

श्री केदारनाथ (हिमालय)

श्री अमलेश्वर (ओमकारेश्वर)

श्री घुश्मेश्वर (इलोरा)

श्री महाकालेश्वर (उज्जैन)

श्री सोमनाथ (सौराष्ट्र)

महाशिवरात्रि १४ फरवरी '९९

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम् । उज्जयिन्यां महाकालमोमकारममलेश्वरम् ॥
परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशंकरम् । सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने ॥
वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यंबकं गौतमी तटे । हिमालये तु केदारं घुश्मेशं च शिवालये ॥
एतानि ज्योतिर्लिंगानि सायं प्रातः पठेन्नरः । सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति ॥

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ७४
९ फरवरी १९९९

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

इस अंक में

१. गीता-अमृत २
★ परम शांति का अनुभव
२. परमहंसों का प्रसाद ५
★ महा कर्त्ता, महा भोक्ता, महा त्यागी बनो
★ ''मुझे तो वही चाहिए जो बिछुड़े नहीं...''
३. पर्वमांगल्य ९
★ महाशिवरात्रि
★ चैतन्य महाप्रभु का दिव्य प्रेमोन्माद
४. जीवन-सौरभ १३
★ प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति
५. संत-चरित १४
★ प्रेरणास्रोत नारदजी
६. सत्संग-सुमन १५
★ पूर्वजन्म का वृत्तांत
७. प्रेरक प्रसंग १८
★ गीता से मठ बना
★ तपस्वी से शिकारी !
★ सत्संग की आधी घड़ी
८. जीवन-पाथेय २१
★ न्याय पाने की कला
★ सांत्वना
९. युवा जागृति संदेश २३
★ त्यागो लापरवाही को...
१०. सर्वदेवमयी गौमाता २५
★ गौमाता : ऊर्जा का अक्षय स्रोत
११. शरीर-स्वास्थ्य २५
★ विश्व में बढ़ता जा रहा हृदय रोग, उसके कारण व निवारण के उपाय
१२. योगयात्रा २८
★ पूज्यश्री की कृपा से ब्लड कैन्सर मिटा
★ गुरुदेव की कृपा से पितरों के दर्शन
१३. संस्था-समाचार २९

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग
SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

परम शांति का अनुभव

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

'श्रद्धावान्, तत्पर और जितेन्द्रिय पुरुष ज्ञान प्राप्त करता है। ज्ञान प्राप्त करने से शीघ्र ही वह परम शांति को प्राप्त होता है।' (गीता : ४.३९)

जिसको हम ज्ञान कहते हैं, श्रीकृष्ण की भाषा में वह परमात्मतत्त्व से संबंधित ज्ञान है।

एक होता है ऐहिक ज्ञान और दूसरा होता है वास्तविक ज्ञान। वास्तविक ज्ञान की सत्ता से ही ऐहिक ज्ञान पाना संभव है। वास्तविक ज्ञान से सत्ता लेकर हमारा मन अलग-अलग कल्पना करके व्यवहार करता है। जीव को जब तक वास्तविक ज्ञान का बोध नहीं होता, तब तक उसको परम शांति नहीं मिलती और जब तक परम शांति नहीं मिलती, तब तक जीव का कष्ट, मुसीबत और जन्म-मरण का दुःख दूर नहीं हो सकता।

आधिभौतिक शांति, आधिदैविक शांति और आध्यात्मिक शांति अर्थात् मानसिक शांति- ऐसी शांतियाँ तो कई बार आती हैं और चली जाती हैं। किंतु जब किसी सद्गुरु की कृपा से आत्म-साक्षात्कार होता है, आत्मज्ञान होता है, तब परम शांति का अनुभव होता है। एक बार परम शांति मिल गई तो फिर वह जाती नहीं। ज्ञान हुआ कि परम शांति हो गई।

ज्ञान प्राप्त करने के लिए भगवान साधन बता रहे हैं कि :

श्रद्धावान् लभते ज्ञानं...

कुछ लोग कहते हैं कि : 'श्रद्धा करो, श्रद्धा करो। कुछ बोलने की जरूरत नहीं है। बस, श्रद्धा करो।'

श्रद्धा का मतलब यह नहीं कि किसी मजहब को, किसी मत को, किसी पंथ को ही मानकर उसीमें लगे रहना और जिंदगी भर कोल्हू के बैल की तरह घूमते रहना। ऐसी श्रद्धा नहीं करें कि आपके अपने मन-बुद्धि कुंठित रह जाएँ और कोई आपकी श्रद्धा का दुरुपयोग करता रहे। श्रद्धा के बहाने ऐसा भी होता रहता है।

कई बार श्रद्धालुओं को लगता है कि मुझमें बहुत श्रद्धा है। भगवान श्रीकृष्ण ऐसे श्रद्धालुओं को अपनी श्रद्धा का मापदंड निकालने की तरकीब बताते हैं। आपकी श्रद्धा कितनी है, उसको जानना चाहते हो तो साधन-भजन में आपकी तत्परता कितनी है ? मुक्ति पाने की आपकी उत्कण्ठा कितनी है ? यह देखो। मुक्ति पाने की जितनी तत्परता होगी, उतना इन्द्रिय-संयम होगा। जितना इन्द्रिय-संयम होगा, उतना अंतरात्मा बलवान होगा। फिर आप सुख-दुःख में विचलित नहीं होंगे। दुनियाँ की बड़ी-से-बड़ी हानि भी आपको दुःखी नहीं कर सकेगी।

जैसे उल्लू को सूर्य का पता नहीं होता, वैसे ही अज्ञानी को अपनी असलियत का पता नहीं होता। इसलिए वह छोटी-छोटी चीजों से प्रभावित होकर सुखी या दुःखी होता रहता है और यह दुर्लभ मानव जीवन नश्वर वस्तुओं के पीछे यूँ ही खपा देता है।

श्रद्धा की जरूरत हर जगह है। केवल ईश्वर

के मार्ग में ही श्रद्धा की आवश्यकता है, ऐसा नहीं है। व्यवहार में भी श्रद्धा की आवश्यकता है।

जो बद्रीनाथ की यात्रा पर जाते हैं, वे यात्री भी ड्राइवर-कंडक्टर पर श्रद्धा रखकर बस में बैठते हैं। हालाँकि कई बसें रास्ते में ही दुर्घटनाग्रस्त हो जाती हैं और यात्री परलोक सिधार जाते हैं। फिर भी ड्राइवर पर श्रद्धा रखकर लोग यात्रा करते हैं। अपने पिता पर भी श्रद्धा रखनी पड़ती है। माँ ने कह दिया कि 'यह तेरा पिता है' तो मान लिया। श्रद्धा तो माँ-बाप पर भी रखनी पड़ती है। फिर 'यह मामा है, यह चाचा है' यह भी श्रद्धा से ही तो मानते हो।

यह सब व्यावहारिक श्रद्धा है। लेकिन श्रीकृष्ण जिस श्रद्धा की बात करते हैं, वह है अपने आत्मदेव को पाने की। उस श्रद्धा की जरूरत है जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि से छूटने के लिए, सर्व प्रकार के दुःख और मुसीबतों से सदा के लिए पार होने के लिए।

जो चल वस्तुएँ हैं, उनके प्रति हमारा आकर्षण है। किन्तु जो अचल है उसके प्रति हमारी श्रद्धा नहीं, उत्साह नहीं इसलिए हम अशांत होते हैं। जो नश्वर चीजें हैं, चल वस्तुएँ हैं, उनसे सुखी होने की बेवकूफी जारी है, इसलिए हम अशांत हैं। परंतु वास्तव में जो शांतस्वरूप है, सुखस्वरूप है, जिसको पाने के बाद कुछ पाना शेष नहीं रहता, जिसमें स्थित होने के बाद मौत की भी मौत हो जाती है ऐसे परमात्मतत्त्व को पाने की तत्परता आ जाए, वास्तविक स्वरूप में टिकने की दृढ़ता आ जाए, तो शांति तो हमारा स्वभाव है, अमरता तो हमारा स्वभाव है, उसका आपको पता नहीं है। मरनेवाले शरीर और मिटनेवाली वस्तुओं में इतने तो विमोहित हो गये कि आज तक अपनी अमरता का ज्ञान नहीं पा सके।

अपने मुँह में बत्तीस दाँत हैं। हैं तो पत्थर के लेकिन कभी मन में ऐसा नहीं होता कि पत्थर पड़े हैं, निकालकर फेंक दें। किन्तु जब उसमें रोटी का टुकड़ा या सब्जी का तिनका फँस जाता है तो जीभ बार-बार वहीं जाती है। उसको निकाले बिना चैन नहीं लेने देती। दाँत होना स्वाभाविक है, पर दाँत में कोई चीज फँस जाना अस्वाभाविक है। उसको निकालना पड़ता है।

ऐसे ही जीवन में सुख और शांति सब चाहते हैं। कोई दुःख और अशांति नहीं चाहता। सुख और शांति जीवन की स्वाभाविक माँग है क्योंकि सुख और शांति प्राणी का मूल स्वभाव है। दुःख और अशांति मन की बेवकूफी से, इच्छा-वासनाओं को पोसने से ही आती हैं। दुःख और अशांति पैदा करे ऐसे विकारों में और तुच्छ चीजों के आकर्षण में हम फँस जाते हैं। वहाँ से अपने को छुड़ाने के लिए साधन में तत्परता चाहिए।

चातक मीन पतंग जब, पिया बिन नहीं रह पाय।
साध्य को पाये बिना, साधक क्यों रह जाय॥

साधक अगर साध्य को पाये बिना रह जाता है तो समझो परमात्मा में उसकी श्रद्धा दृढ़ नहीं है। परमात्म-तत्त्व का ज्ञान पाने के लिए श्रद्धा भी चाहिए और श्रद्धा के साथ तत्परता भी चाहिए। तभी वह मुक्ति के मार्ग पर चल सकता है।

अगर कोई कहता है कि : 'तुम श्रद्धा करो। तुम मर जाओगे तो तुम्हें बहिश्त मिलेगा, हूरें मिलेंगी, शराब के चश्मे होंगे...' तो वह श्रद्धा नहीं, बल्कि अंधश्रद्धा है।

श्रीकृष्ण कहते हैं कि ज्ञान पाने के लिए श्रद्धा के साथ तत्परता भी चाहिए। अगर मरने के बाद कोई सीधा स्वर्ग पहुँच जाता या मुक्त हो जाता तो श्रीकृष्ण अर्जुन को गीता का उपदेश क्यों देते ? अर्जुन को कह देते : 'तू युद्ध कर। मर जाएगा तब मैं तुझे मुक्त कर दूँगा।' नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। वशिष्ठजी ने रामजी को आत्मज्ञान का उपदेश क्यों दिया ? अष्टावक्र

ने राजा जनक को तत्त्वज्ञान का उपदेश क्यों दिया ? जब किसीको भूख लगे और वह खुद खाना खाए, तभी उसकी भूख मिटेगी ।

असंयमी इन्द्रियाँ और मन आदमी को कमजोर कर देते हैं । जिसके चित्त पर छोटी-छोटी बातों का असर होता है, वह आदमी बहुत छोटा हो जाता है । जिसके चित्त पर छोटी-छोटी बातों का असर नहीं होता, उसका हृदय आत्मज्ञान के विचार से विशाल होता चला जाता है। ज्यों-ज्यों चित्त छोटी-छोटी बातों में उलझने से बचता रहेगा, त्यों-त्यों चित्त पर सुख-दुःख का, मान-अपमान का, हानि-लाभ का असर कम होता जाएगा । इससे साध्य के प्रति उसकी तत्परता सिद्ध हो जाएगी ।

अगर आप किसी आदमी का भविष्य जानना चाहो तो उससे बातें करते वक्त देखते रहो कि छोटी-छोटी बातों का उसके चित्त पर प्रभाव पड़ता है या नहीं पड़ता। अगर छोटी-छोटी बातें उसके चित्त को असर कर जाती हैं, तो समझो उसका भविष्य उज्ज्वल नहीं है। लेकिन जिसके चित्त पर ऐसा असर नहीं होता, उसका हृदय विशाल होता जाएगा, वह महान् होता जाएगा और एक दिन वह महात्मा हो जाएगा।

कोई भी व्यक्ति चाहे वह कोई धर्मगुरु हो, किसी संस्था का अधिपति हो, किसी कुटुंब या समाज का विशेष व्यक्ति हो- उसकी सफलता का रहस्य जानने के लिए उसके चित्त की स्थिति कैसी है, यह देखना चाहिए । उसकी संस्था या घर की परिस्थिति कैसी है, यह मत देखो क्योंकि उसकी सफलता का कारण घर या संस्था की परिस्थिति नहीं है । अपनी दृढ़ता, तत्परता, विनम्रता, मधुरता एवं उत्साह के कारण वह सफल होता है । उसके चित्त की जैसी स्थिति होगी, वैसी ही घर में या संस्था में सुव्यवस्था या कुव्यवस्था होगी ।

अपने व्यवहार का आधार अपना चित्त है। हम किसीको कोई काम करने का आदेश दें तो आदेश देने का, कहने का ढंग जैसा होगा, वैसा ही सामनेवाले के चित्त में या तो उत्साह होगा या फिर ज्यों-का-त्यों काम निपटा देने की सोचेगा या फिर 'काम नहीं करें' ऐसा विपरीत भाव भी जगेगा।

किसी भी कार्य में जितनी आपकी श्रद्धा और तत्परता होगी, उत्साह होगा, उतना आपका चित्त विशाल होगा, व्यवहार उदार होगा और उसका प्रभाव सामनेवाले के चित्त पर पड़ेगा । जैसा आपका व्यवहार होगा, वैसा व्यवहार सामनेवाला आपके साथ करेगा । जो दूसरों को चोर या ठग की नजरों से देखता है, उसको चोर या ठग मिल जाते हैं। जो दूसरों से तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करता है, उसे सब ओर से तिरस्कार ही मिलता है । लेकिन जो दूसरों में अपने प्यारे इष्ट को, परब्रह्म परमात्मा को निहारता है, उसका चित्त परमात्मामय हो जाता है । वह परब्रह्म परमात्मा का ज्ञान पा लेता है ।

व्यावहारिक दृष्टि से उसे परब्रह्म परमात्मा की आह्लादिनी शक्ति माया में यह जगत, उसके पंचमहाभूत और सब भौतिक वस्तुएँ दिखती हैं। परंतु तात्त्विक दृष्टि से देखा जाए तो **एकमेवाद्वितीयम्...** अनंत ब्रह्मांडों में वह एक ही परमात्मतत्त्व फैला हुआ है, ऐसा ज्ञान हो जाता है । जिस ज्ञान को पाकर तत्काल परम शांति का अनुभव होता है, उस व्यापक चैतन्य का ज्ञान पाने के लिए साधन-भजन के समय तो लगें ही, व्यवहारकाल में भी सावधान रहें। सुख-दुःख के दलदल में गिरने से अपने को बचाते रहें। साक्षीभाव, असंगभाव, शुद्ध स्वरूप की स्मृति या जप का अवलंबन लेते रहें।

ॐ शांति... ॐ शांति....ॐ शांति

*

परमहंसोंका प्रसाद

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

महा कर्त्ता, महा भोक्ता, महा त्यागी बनो

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में श्री वशिष्ठजी महाराज श्रीराम से कहते हैं :

''हे राम ! महा कर्त्ता, महा भोक्ता और महा त्यागी होकर रहो।''

महा कर्त्ता उसे कहते हैं कि जो आपतित प्रवाह अर्थात् जो काम आ जाये, उसे तत्परता से करे लेकिन अपने में करने का अहं न घुसने दे। 'मैंने ऐसा किया... मैंने वैसा किया... मैंने इतना किया...' ऐसा सोचा तो तुच्छ कर्त्ता हो जायेगा। कर्म तो तत्परता से करो लेकिन अपने में कर्त्तृत्वभाव को न पनपने दो। चाहे अनुकूलता आ जाये, चाहे प्रतिकूलता आ जाये, अपना कर्त्तव्य तत्परता से करो और करने से पहले एवं करने के बाद अपने को साफ-सुथरा कर दो। जैसे, कहीं भी जमीन पर बैठते हैं तो उठने के बाद कपड़े झाड़ देते हैं ऐसे ही कर्म में उतरने से पहले अपने शुद्ध स्वभाव का चिंतन करो और कर्म पूरा करने के बाद- 'मैंने किया...' ऐसा चिंतन नहीं, वरन् 'हो गया... शरीर से काम हो गया... मैंने कभी कुछ किया ही नहीं है...' ऐसा चिंतन करो।

शुभ कर्म करने का अहं न आये और अशुभ कर्म से बचो। पहले के अशुभ का विषाद न करो। जिसकी सत्ता से इन्द्रियाँ एवं मन कर्म करते हैं, उस सत्तास्वरूप को जो 'मैं' रूप में जानता है, वह महा कर्त्ता है। उसकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है, योग्यताएँ निखर आती हैं एवं जरा-जरा-सी बातों पर चिढ़ना-कुढ़ना बंद हो जाता है।

जिसकी सत्ता से सारे जीव चेष्टा करते हैं, उस सत्ता में टिककर कर्म करो लेकिन अपनी इन्द्रियों के कर्मों को एवं मन के सोचने को सत्य न मानो। जिसकी सत्ता से कर्म होते हैं, उसीमें एकाकार होगे तो महसूस करोगे कि 'एक शरीर में क्या, सब शरीरों में मैं ही कर्म कर रहा हूँ... ।' करने की सत्ता जहाँ से आती है, उस चैतन्य को 'मैं' रूप में मानो तो हो गये महा कर्त्ता।

महा भोक्ता कौन है ? सुखद वस्तु आ जाय उसका उपयोग करे और दुःखद वस्तु आ जाय तो उसका भी उपयोग होने दे। दुःख में दुःखी न हो और सुख में आसक्त न हो। सुख पाकर हर्षित न हो और दुःख पाकर शोकातुर न हो बल्कि 'दुःखद वस्तुएँ एवं सुखद वस्तुएँ आने-जानेवाली हैं' ऐसा मानकर जो दुःखी-सुखी नहीं होता, वह महा भोक्ता है। 'यश हुआ, लाभ हुआ, जय-जयकार हुआ- वह भी इस माया में, स्वप्नतुल्य संसार में और अपयश हुआ, हानि हुई- वह भी इस माया में, स्वप्नतुल्य संसार में... मेरे आत्मस्वरूप में इसकी कोई गंदगी नहीं है- ऐसा जो जानते हैं, वे महा भोक्ता हैं।

सुख-दुःख, लाभ-हानि सब खेलमात्र हैं। किसीके लिए हृदय में गाँठ बाँधना अपना हृदय खराब करना है। चाहे किसीने हमारे विरुद्ध कोई भी अपराध कार्य किया हो, जब तक हम अपने-आपको आत्मा के रूप में नहीं जानते, तब तक अपराधी के प्रति गाँठ बँधेगी किन्तु यदि अपने को आत्मरूप में जान लिया तो श्रीराम की नाईं कोई गाँठ नहीं बँधेगी।

रावण ने कितना बड़ा अपराध किया ! साधु

के वेश में आकर सीता का अपहरण करके ले गया, लेकिन श्रीरामजी के चित्त में गाँठ नहीं बँधी। उसकी मृत्यु पर श्रीराम ने कहा : ''आज लंकेश धरती से चला गया... एक विद्वान और बड़ा योद्धा धरती से चला गया....''

लक्ष्मण : ''आश्चर्य है ! आप उसकी प्रशंसा कर रहे हैं ? माँ सीता को जो ले गया, ऐसे जुल्मी की मौत पर आप आँसू बहा रहे हैं ?''

श्रीराम : ''उसके जीवन में यही एक गलती थी। बाकी तो वह बड़ा विद्वान और योद्धा था।''

श्रीराम के चित्त में गाँठ नहीं है, तो सत्य दिखता है। जिसके चित्त में गाँठ होती है, उसे सत्य नहीं दिखता, वरन् अपनी कल्पना दिखती है। अतः यदि किसीके लिए नफरत पैदा हो, तो समझ लेना कि अपनी कल्पना नफरतवाली है।

यह संसार है। इसमें सब अपना-अपना प्रारब्ध लेकर जी रहे हैं, अपने-अपने स्वभाव के अनुसार चेष्टा कर रहे हैं।

हर तरंग एवं बुलबुले की अपनी चेष्टा है, लेकिन गहराई में तो शांत जल है। ऐसे ही गहराई में तो शांत आत्मा-परमात्मा है लेकिन मन के भाव सबके अलग-अलग हैं। फिर मन के भाव सदा एक जैसे नहीं रहते। जिसने गलत किया, उस वक्त उसका ऐसा भाव था। सदा थोड़े-ही वह भाव रहता है। भाव तो बदलते रहते हैं। जिसने किया वह तो भूल गया, लेकिन आपने गाँठ बाँधकर अपने चित्त को छोटा बना दिया, तुच्छ बना दिया। वह तो गलत करके भूल गया और आप गाँठ बाँधकर बँध गये। लेकिन यदि किसीने आपसे तुच्छ व्यवहार किया और आप उसे स्वप्नतुल्य समझकर अपनी आत्मा में आ गये, तो आप महा भोक्ता हो गये।'

वशिष्ठजी महाराज कहते हैं : ''हे रामजी ! महा कर्त्ता, महा भोक्ता, महा त्यागी होकर रहो।''

इस स्थूल शरीर को 'मैं' मत मानो। सूक्ष्म शरीर के जो भाव एवं विचार हैं, उन्हें भी 'मैं' एवं 'मेरा' मत मानो। कारण शरीर से जो समाधि होती है, वह 'मेरी समाधि है'-ऐसा मत मानो। कारण शरीर में तमस् की प्रधानता है तो नींद आती है और सत्त्व की प्रधानता है तो समाधि होती है। वास्तव में ये चित्त एवं चित्त के गुण-दोष हैं और चित्त है माया का। उस परमेश्वर में इसका कोई महत्त्व ही नहीं है। उस परमेश्वर स्वभाव में जो रहता है, आकाश की नाईं उस व्यापक ब्रह्म में जो रहता है वह महा त्यागी है। वह दुनिया की आसक्ति को तो छोड़ ही चुका होता है, उसे स्वर्ग की भी आसक्ति नहीं होती। वह पाप तो नहीं करता, पुण्यकर्म करता है लेकिन पुण्यकर्म के फल को भोगने की भी उसकी इच्छा नहीं होती। जो यशस्वी कर्म तो करता है लेकिन उसे यश की इच्छा नहीं होती, वह महा त्यागी है।

ऐसा महा कर्त्ता, महा भोक्ता, महा त्यागी स्वयं ब्रह्मवेत्ता होता है।

यही बड़ी ऊँची बात है जिसे भगवान शिव ने भृंगीश को बतायी, भगवान वशिष्ठ ने अपने प्रिय राम को बतायी और वही बात आपको भी सुनने का अवसर मिल गया। आज श्रीराम के जमाने जैसा वातावरण, खान-पान आदि तो नहीं है लेकिन 'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' का जो ज्ञान श्रीराम को मिला था, वही आपको भी मिल रहा है। यह कलियुग की कितनी कृपा है !

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' की अपने आपमें बड़ी भारी महिमा है। इसको सुनने-समझनेवाला तीनों तापों से एवं तमाम दुःखों से पार हो जाता है। जैसे, सूरज उगने से अंधकार खोजने पर भी नहीं मिलता, ऐसे ही इस ग्रंथ को समझकर स्थिर रहने से दुःख खोजने पर भी नहीं मिलता। इसके ज्ञान को समझने के लिए सत्पात्रता की आवश्यकता होती है। जिनमें इसके ज्ञान को सुनने-समझने की रुचि नहीं है उनका

कर्त्तव्य है कि वे पहले स्नान करें, दान करें, यज्ञ करें, व्रत करें, जप करें, अपने में कुछ योग्यता लायें, तब इस ग्रंथ को समझ सकेंगे। अगर इसको थोड़ा-बहुत समझ रहे हों तो उसीमें टिक जायें, बार-बार उसी विचार में लग जायें, तो यह सिद्धांत कल्याण कर देगा।

जिनका शुद्ध हृदय है, उनको यह उपदेश शोभा देता है। जिनका हृदय वासनायुक्त एवं मलिन है, उनको यह उपदेश खतरा पैदा कर सकता है। जो शुद्धचित्त होते हैं, उनको ही सिद्धांत की बात कही जाती है। वे सिद्धांत को सुनकर अगर आदरपूर्वक मनन और निदिध्यासन करें चिरकाल तक, तो ब्रह्म-परमात्मा का साक्षात्कार हो जाये।

*

"मुझे तो वही चाहिए जो कभी बिछुड़े नहीं..."

दो प्रकार के कर्म होते हैं : एक द्रवित कर्म होते हैं, दूसरे शुष्क कर्म होते हैं।

जो पुराने हैं वे हैं शुष्क कर्म एवं जो नये हैं, वे हैं द्रवित कर्म अर्थात् पुराना दाग और नया दाग। द्रवित कर्म हों चाहे शुष्क कर्म हों, इन सारे कर्मों के दाग भगवद्भाव से धुल जाते हैं। भगवद्ध्यान, भगवद्ज्ञान एवं भगवत्परायण होने से द्रवित एवं शुष्क दोनों कर्म कट जाते हैं।

पुराने जमाने में लोग तीर्थयात्रा पर जाते थे। महीने-दो महीने तक वे पैदल यात्रा करते थे। इस दौरान उन्हें संसार के संबंधों का स्मरण नहीं रहता था। साथ-साथ भगवद्-आराधना भी होती थी। इसलिए उनका हृदय शुद्ध हो जाता था। फिर जहाँ-जहाँ महात्माओं का सत्संग मिलता, उनके हृदय में भगवद्रस उभरने लगता।

अभी तो लोग गाड़ी-मोटरों से आते हैं। थोड़ा सुना फिर भगे... चारों तरफ इतनी अशुद्धि है कि जप-ध्यान करके जरा-सा शुद्ध हुए-न-हुए कि फिर कर्मबंधनों से अशुद्ध हो जाते हैं। जैसे, स्नान करने के बाद हाथी अपने ऊपर पुनः धूल डाल देता है, ऐसे ही मनुष्य कर्मों की, कर्मबंधनों की धूल अपने सिर पर डाल देता है। लोग इधर-उधर पचते-मरते हैं, अशांत होते हैं या कोई पुण्योदय होता है तो फिर इधर आते हैं। कुछ दिन यहाँ रहने पर जब थोड़ा-बहुत हृदय शुद्ध होता है तो फिर वे चल पड़ते हैं।

इक्ष्वाकु वंश के सम्राट ने देखा : 'कितना भी राज्य-सुख भोगा, संपदाएँ इकट्ठी कीं और रानियों का स्नेहादि प्राप्त किया लेकिन इन विषय-विकारों में, भोगों में मेरा जीवन व्यर्थ में खप गया...' यह सोचकर वे एकांत अरण्य में झोंपड़ी बनाकर तप करने लगे। मधुकरी करके एक बार भोजन करते एवं दूसरी बार फल आदि से गुजारा कर लेते। वे नियम से एकादशी का व्रत रखते, जप करते और त्रिकाल संध्या करते।

उपवास से शारीरिक दोष दूर होते हैं एवं भगवान के जप-ध्यान से मन-मति के दोष निवृत्त होते हैं।

तप करते-करते उनका अंतःकरण शुद्ध हुआ, मन मलिनता से थोड़ा ऊपर हुआ और अहंता-ममता कम हुई। त्रिकाल संध्यादि करने से राजा की प्राणशक्ति, मनःशक्ति एवं बुद्धिशक्ति का बड़ा विकास हुआ। उनकी उस भगवद्-आकर्षणी शक्ति से खिंचकर शाक्यायन मुनि वहाँ स्वयं आ गये।

शाक्यायन मुनि को देखकर राजा ने अर्घ्य-पाद्य से उनका पूजन किया और प्रार्थना की :

''भगवन् ! आपका दर्शन मेरी तपस्या की सफलता का द्योतक है। मेरे पुण्य एवं मेरी प्रार्थना अब फल गयी।''

हनुमानजी को देखकर विभीषण ने भी उन्हें

कहा था :

अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहीं संता॥

''हे हनुमान ! अब मुझे पक्का विश्वास हुआ है कि भगवान की कृपा के बिना संतों का मिलना संभव नहीं है।''

ऐसे ही शाक्यायन मुनि को देखकर इक्ष्वाकु वंश के सम्राट ने कहा : ''महाराज ! मुझे अब संतोष हुआ कि मेरी प्रार्थना, मेरा जप, मेरा मौन, मेरा उपवास, मेरा व्रत और मेरा तप श्रीहरि ने स्वीकार किया है, तभी आपके दर्शन हुए हैं। महाराज ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरे उद्धार के लिए करुणा-कृपा करके आत्म-प्रसाद का उपदेश दीजिए।''

शाक्यायन मुनि ने कहा : ''राजन् ! तुम वरदान माँग लो कि तुम्हारा खूब यश हो, तुम्हारा राज्य फले-फूले, तुम्हारे पुत्र-पौत्र-प्रपौत्र आज्ञाकारी हों। आत्मविद्या की क्या जरूरत है ?''

राजा : ''महाराज ! पुत्र-पौत्र-प्रपौत्र होंगे फिर अंत में वे मुझे श्मशान में छोड़कर चले आयेंगे। यदि उनमें से कोई 'लोफर' होगा तो मेरी की हुई कमाई चली जायेगी और यदि सब अच्छे होंगे तो उनमें मेरी आसक्ति होगी और उनको याद करते-करते मर जाऊँगा। फिर उन्हीं के घर में गाय, घोड़ा, बैल आदि बनकर भटकना पड़ेगा। इसलिए मुझे तो आत्मविद्या का दान देने की कृपा कीजिए, महाराज !''

मुनि : ''सत्संग और आत्मविद्या तो बहुत ऊँची चीज है। और कुछ माँग लो राजन् !''

राजा : ''महाराज ! और जो कुछ भी मिलेगा, वह सब चला जायेगा। जो भोग अभी तक नहीं मिला है, वह मिलेगा तो उसे भोगकर वही स्थिति हो जायेगी जो पहले के भोगों से हुई थी। अतः महाराज ! जो मिले और मिट जाये, जो मिले और बिखर जाये, जो मिले और आसक्ति करा दे, जो मिले और अहंकार करा दे, जो मिले और भोगी बना दे एवं फिर रोगी बनाकर नरकों में डाल दे- ऐसा तो करोड़ों जन्मों में मिला है। महाराज ! यह मनुष्य जन्म मिला है एवं आप जैसे संत मिले हैं तो आपके द्वारा ऐसा कुछ मिले जो कि नश्वर न हो, जिससे अहंकार न उपजता हो और जो बिछुड़े नहीं। अगर आपके मिलने के बाद भी बिछुड़नेवाली चीज मिले तो मेरे जैसा हतभागी कौन होगा ? इसलिए आपके श्रीचरणों में मैं प्रार्थना करता हूँ कि आपसे मुझे ऐसा कुछ मिले जो कभी न बिछुड़े, कभी न घटे और जिससे मेरा कभी वियोग न हो।''

न बिछुड़े कभी ऐसी शय माँगता हूँ।
गुरुवर ! मैं तुमसे तुम्हें माँगता हूँ॥

शाक्यायन मुनि बड़े प्रसन्न हुए कि राजा अधिकारी है, सत्पात्र है। अतः राजा पर कृपा बरसाते हुए शाक्यायन मुनि ने कहा :

''पुत्र ! तू धन्य है। तुझे मेरे आशीर्वाद हैं। उपदेश तो यही है कि तू आग्रह मत कर कि 'मुझे भगवान दिख जाये...' भगवान दिखना इतना आवश्यक नहीं है, जितना भगवान का ज्ञान आवश्यक है। भगवान तो हैं ही, लेकिन भगवान के होने का लाभ उन्हीं को विशेष मिलता है, जो भगवान की स्मृति करते हैं। भगवान की स्मृति उन्हीं को होती है, जो भगवान के विषय में जानते हैं।

वत्स ! चाहे कर्मयोगी हो, चाहे भक्तियोगी हो या ज्ञानयोगी हो, लेकिन 'भगवान का स्वरूप क्या है ?' - यह जानना सबके लिए अनिवार्य है। बेटा ! तू उसी परमेश्वर के स्वरूप को जान।

'भगवान क्या है ? भगवान को पानेवाला यह जीव कौन है ? जगत क्या है ? दुःख और सुख किसको होता है ? दुःख और सुख से परे कौन रहता है ? दुःख-सुख की जहाँ दाल नहीं गलती, मेरे उस आत्मा एवं परब्रह्म परमात्मा में क्या भेद है ?' इस प्रकार भगवान के स्वरूप

का तू चिंतन कर ।

सुबह नींद में से उठो तो सोचो : 'मैं हूँ ' यह प्रथम विचार, पहला स्फुरण कहाँ से उठता है ? 'मैं हूँ' जहाँ से उत्पन्न होता है, वही मेरा आत्मा है, भगवान है...' ऐसा चिंतन करना। 'मैं फलाना हूँ... मैं फलाना हूँ...' यह माया है। माया के ये विचार मिटेंगे और माया के शरीर भी मिटेंगे। अतः अमिट तत्त्व का चिंतन करना।

'दुःख आया और चला गया, सुख आया और चला गया। फिर कभी ज्यादा दुःखी हुए तो कभी कम दुःखी हुए लेकिन इन दोनों को जो जानता है वह मैं हूँ... वही मेरा भगवान है... जाननेवाला सच्चिदानंद है... आनंदस्वरूप है। प्रभु तेरी जय हो !' इस प्रकार भगवान के साथ मिलकर अठखेलियाँ करना।''

इस प्रकार इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए राजा को शाक्यायन मुनि ने उपदेश दिया।

राजा को गुरु की कृपा पूर्ण रूप से पच गयी। उनकी भगवद्स्मृति बढ़ी। भगवदाकार वृत्ति ने जगदाकार आकर्षण मिटा दिया और फिर वह वृत्ति भी शांत होकर, भगवान में, परम शांति में स्थित हो गयी। फिर उनके चित्त से नित्य नवीन भगवदीय रस उभरने लगा। वे जब तक जिये, तब तक जीवन्मुक्त होकर जिये और जब शरीर छोड़ा तो परब्रह्म परमात्मा में व्याप गये।

*

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

पर्व मांगल्य

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

महाशिवरात्रि

[१४ फरवरी '९९ : महाशिवरात्रि पर विशेष]

'ईशान संहिता' में महाशिवरात्रि व्रत के संबंध में कहा गया है :

माघकृष्णचतुर्दश्यामादिदेवो महानिशि ।
शिवलिंगतयोद्भूतः कोटि सूर्यसमप्रभः ।
तत्कालव्यापिनी ग्राह्य शिवरात्रिव्रते तिथिः ॥

माघ मास की कृष्ण चतुर्दशी की महानिशा में आदिदेव महादेव कोटि सूर्य के समान दीप्तिसंपन्न हो शिवलिंग के रूप में आविर्भूत हुए थे। अतएव महाशिवरात्रि-व्रत में उसी महानिशा-व्यापिनी चतुर्दशी का ग्रहण करना चाहिए।

'ईशान संहिता' के अनुसार पृथ्वी से शिवजी की प्रथम लिंगमूर्ति का आविर्भाव उक्त तिथि की महानिशा में ही हुआ था। इसीके उपलक्ष्य में इस व्रत की उत्पत्ति बतायी जाती है।

'शिवपुराण' में लिखा है कि एकमात्र शिव ही निर्गुण-निराकार होने से 'निष्कल' हैं, शेष सभी सगुण विग्रहयुक्त होने से 'सकल' कहे जाते हैं। निष्कल होने से ही शिव का निराकार (आकार-विशेष शून्य) लिंग पूज्य होता है एवं सकल होने से ही अन्य देवताओं का साकार विग्रह पूज्य होता है।

'शिवपुराण' में ब्रह्मा-विष्णु का विवाद मिटाने के लिए निष्कल स्तंभरूप में शिव का प्रादुर्भाव इस प्रकार वर्णित है :

सृष्टि के आदि में दो महाशक्तियों ब्रह्मा एवं विष्णु के बीच विवाद उत्पन्न हुआ। ब्रह्माजी ने कहा कि सृष्टिकर्त्ता की विशेषता ज्यादा है एवं विष्णुजी ने कहा कि पालनकर्त्ता की विशेषता ज्यादा है। दोनों में कौन महान है ? इस विषय पर उनका विवाद मिटाने के लिए एक परम ज्योतिर्मय लिंग का प्रादुर्भाव हुआ, जिसका एक छोर आकाश की ओर जा रहा था एवं दूसरा छोर पाताल की ओर जा रहा था। दोनों छोरों का कोई अंत नजर नहीं आ रहा था।

ब्रह्माजी उस लिंग के छोर का पता लगाने के लिए हंस पर आरूढ़ होकर ऊपर की ओर गये एवं विष्णुजी वराह रूप धारण कर नीचे की ओर गये। हजारों वर्षों तक घोर परिश्रम करने पर भी दोनों को उस परम ज्योतिर्मय लिंग का आदि-अंत न मिल पाया। आखिर दिव्य वाणी से भगवान शिव ने ब्रह्मा-विष्णु के विवाद को मिटाया। जिस रात्रि को वह लिंग प्रगट हुआ, वही रात्रि शिवरात्रि कहलायी। लिंग को देखकर दोनों को आश्चर्य हुआ था कि अहो ! इसका कोई ओर-छोर ही नहीं है ! अतः यह रात्रि 'अहोरात्रि' भी कहलाती है।

वर्ष में चार महारात्रियाँ होती हैं :

(१) मोहरात्रि अर्थात् जन्माष्टमी

(२) कालरात्रि - नरक चतुर्दशी

(३) दारुण रात्रि - होली एवं

(४) अहोरात्रि - शिवरात्रि

'शिव' से तात्पर्य है 'कल्याण' अर्थात् यह रात्रि बड़ी कल्याणकारी रात्रि है। इस रात्रि में किया जानेवाला जागरण एवं साधन-भजन अत्यधिक फलदायी माना जाता है।

एक होती है रातपाली, जो चार पैसे की नौकरी के लिए की जाती है और दूसरा होता है जागरण। 'जागरण' का मतलब है जागना। जिस हेतु से आपको मनुष्य जन्म मिला है, वह मनुष्य जन्म कहीं विषय-विकारों में बरबाद न हो जाये बल्कि अपने लक्ष्य परमात्म-तत्त्व को पाने में ही लगे- इस प्रकार की विवेक-बुद्धि से अगर आप जागते हो तो वह शिवरात्रि का 'जागरण' हो जाता है। इस जागरण से आपके जनम-जनम के पाप-ताप कटने लगते हैं, बुद्धि शुद्ध होने लगती है एवं जीव शिवत्व में जागने के पथ पर अग्रसर होने लगता है।

अन्य उत्सवों जैसे दीपावली, होली, मकर संक्रांति आदि में खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, मिलने-जुलने आदि का महत्त्व होता है, लेकिन यह शिवरात्रि महोत्सव ऐसा नहीं है। यह व्रत, उपवास एवं तपस्या का दिन है। दूसरे महोत्सव तो लोगों से मिलने के लिए होते हैं लेकिन यह शिवरात्रि का पर्व अपने अहं को मिटाकर लोकेश्वर से मिलने के लिए है।

पांडवों ने जब अपना आत्मकल्याण करने का संकल्प किया, तब शिवरात्रि के महोत्सव का आयोजन किया जिसमें भगवान श्रीकृष्ण भी सम्मिलित होने के लिए द्वारिका से हस्तिनापुर आये थे- ऐसा उल्लेख पुराणों में मिलता है।

भगवान श्रीराम ने भी जब लंका की ओर प्रयाण करने का विचार किया, तब पहले सेतुबंध रामेश्वर की स्थापना की एवं आराधना-उपासना करके शिवजी को प्रसन्न किया। बाद में उन्होंने लंका की ओर कूच की।

इन पौराणिक कथाओं से ज्ञात होता है कि कोई भी भगीरथ कार्य करना हो तो उसके लिए अपने जीवन में थोड़ी एकाग्रता लानी चाहिए, थोड़ी आराधना-उपासना करनी चाहिए। मन में अनंत शक्ति है। यदि मन इन्द्रियों के पक्ष में होकर बहिर्मुख हो जाता है तो उसकी शक्ति क्षीण हो

जाती है। लेकिन वही मन यदि अंतर्मुख होकर शिवतत्त्व के, आत्मतत्त्व के पक्ष में हो जाता है तो उसमें अद्भुत शक्तियों का प्रादुर्भाव होने लगता है। इस प्रकार यह केवल लौकिक ही नहीं, वरन् आध्यात्मिक जगत में भी सफलता के शिखरों को सर करने में सहयोगी हो जाता है।

*

चैतन्य महाप्रभु का दिव्य प्रेमोन्माद

[२ मार्च '९९ : श्री चैतन्य जयंती पर विशेष]

१७-१८ वर्षीय निमाई भगवान जगन्नाथ के दर्शन करने हेतु एक बार अकेले ही जगन्नाथपुरी चले गए।

तुम भी जब संत या ईश्वर के दर्शन करने जाओ तो अकेले ही जाना। मंदिर या आश्रम के द्वार तक साथी भले साथ रहें, किन्तु भीतर प्रवेश तो तुम अकेले ही करना। अकेले दर्शन करने से अहोभाव का जो स्वाद आता है, वह साथी के साथ होने पर नहीं आता।

जगन्नाथजी के दर्शन करते-करते निमाई का मन बदल गया, आँखों की पुतलियाँ स्थिर हो गयीं एवं मन केन्द्रित हो गया। इतने में वे क्या देखते हैं कि जगन्नाथजी की प्रतिमा में से एक नन्हा-सा, साँवला-सलोना, सुकुमार बालक उनको निहारते हुए बोल रहा है :

''हे निमाई ! तू क्या कर रहा है ? अक्षरों को पढ़ते-पढ़ते तू निरक्षर होता जा रहा है ? विद्या को रटते-रटते तू अविद्यावाला होता जा रहा है ? विद्यार्थियों को पढ़ाते-पढ़ाते तू मेरा विद्यार्थी होते हुए भी भटकता जा रहा है ? दूसरों को देखते-देखते तू मुझे भूला जा रहा है, पागल ! देख, अब मुझे ठीक से देख-पढ़ ले। औरों को क्या पढ़ायेगा ?''

निमाई की आँखों से आँसू की धारा बहने लगी। दर्शक तो कई आये और गये, लेकिन पंडित निमाई को हो रहा दर्शन तो अलौकिक था। जिस समय तुम्हारी वृत्तियाँ और मन एकाग्र होते हैं, उस समय तुम सूक्ष्म जगत की चीजें देख-सुन सकते हो, बाकी समय नहीं देख सकते।

उस अलौकिक दर्शन से निमाई का विवेक जाग उठा।

जिसके पास विवेक है, वह पत्थर-लक्कड़ की मूर्ति से भी संकेत ले लेता है किन्तु जिसके पास विवेक नहीं है, उसे जीवित-जागृत महापुरुष मिल जायें, फिर भी लाभ नहीं ले पाता।

निमाई पंडित उस दर्शन से अपनी सुध-बुध खो बैठे।

जो अपने को खो देता है, वही तो ईश्वर को पा सकता है। निमाई को भी ऐसा लगा मानो, उन्हींका आत्मतत्त्व-चैतन्यदेव श्रीकृष्ण होकर कह रहा है :

''हे निमाई ! औरों को कब तक देखेगा ? तू मुझे देख। तू औरों को प्यार कब तक करेगा, मुझीसे प्यार कर।''

निमाई का रोम-रोम पुलकित हो रहा है। लोगों को बाहर से वे अभी-भी निमाई पंडित ही दिख रहे थे, किन्तु भीतर से वे पूरी तरह बदल चुके थे।

जब निमाई घर लौटे, तब अपनी माँ के पास आकर चुपचाप पैर दबाने लगे। निमाई को एकदम मौन देखकर माँ से रहा न गया और वे बोल उठीं :

''निमाई ! क्या बात है ? तू एकदम गुप-चुप क्यों रहता है ?''

निमाई : ''माँ ! अब मुझे घर में रहने की इच्छा नहीं होती है।''

माँ : ''तेरे पिता तो मुझे कबसे छोड़कर चले गये, तेरा बड़ा भाई भी चला गया और अब तू भी जाना चाहता है ? ठीक है, मेरे भाग्य में यही है तो यही सही। मैं लोगों के घर झाड़ू-बुहारी करके

खा लूँगी। जा, तू भी साधु हो जा।''

निमाई का हृदय भर उठा और बोले :

''माँ ! तू ऐसा मत कह। मैं यहीं रहूँगा, तेरी सेवा करूँगा।''

निमाई को वापस आया जानकर सभी विद्यार्थी पढ़ने के लिए आ गये और बोले :

''गुरुजी ! पढ़ाइये। परीक्षा के दिन नजदीक आ रहे हैं।''

निमाई : ''अब और किसीसे पढ़ लो। मुझसे अब नहीं पढ़ाया जायेगा।''

विद्यार्थी : ''अब परीक्षा के वक्त दूसरा कौन हमें पढ़ायेगा ? आप ही पढ़ाइये न !''

विद्यार्थियों के आग्रह को देखकर निमाई न्यायशास्त्र पढ़ाने के लिए बैठे : ''पृथ्वी का कारण जल है, जल का कारण तेज है, तेज का कारण वायु है, वायु का कारण आकाश है, आकाश का कारण महत्तत्त्व है, महत्तत्त्व का कारण प्रकृति है और प्रकृति का कारण परब्रह्म परमात्मा है। उसी परमात्मा को जानना न्याय है, बाकी सब अन्याय है।''

विद्यार्थी चौंककर बोल उठे : ''गुरुजी ! यह क्या पढ़ा रहे हैं ? यदि हम ऐसा ही लिखेंगे तो कैसे उत्तीर्ण हो सकेंगे ?''

निमाई : ''इसीलिए मैं कह रहा हूँ कि किसी और से पढ़ लो। अब पढ़ाना मेरे बस की बात नहीं रही।''

विद्यार्थी चले गये। किन्तु जिसने एक बार परब्रह्म परमात्मा की विद्या को, ब्रह्मविद्या को पढ़ लिया, फिर उसके लिए बाकी भी क्या रह जाता है ? यही अवस्था निमाई की हो रही थी। अब परमात्मप्रेम के सिवाय कुछ भी पढ़ाना उनके लिए असंभव-सा हो गया था। कबीरजी ने ठीक ही कहा है :

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय॥

न्यायशास्त्र के प्रसिद्ध पंडित निमाई अब वास्तव में पंडित हो गये थे, पर कैसे पंडित ? परमात्मप्रेम के पंडित।

परमात्मप्रेम का पथिक कैसा होता है ?

कबीरजी ने कहा है :

छनहिं चढ़ै छन उतरै, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम पिंजर बसै, प्रेम कहावे सोय॥

सच्चा प्रेमी न तो क्षण भर में ऊपर ही चढ़ जायेगा और न दूसरे ही क्षण में नीचे गिर जायेगा। उसकी स्थिति तो सदा एक-सी ही बनी रहेगी।

निमाई ऐसे ही प्रेमरस में सराबोर हो चुके थे। पूर्वकाल के न्यायशास्त्र के जाने-माने पंडित निमाई ने आगे चलकर चैतन्य महाप्रभु के रूप में लाखों-लाखों लोगों को भगवद्-प्रेम से सराबोर कर दिया था। धन्य हैं श्री चैतन्य महाप्रभु एवं धन्य है उनकी भगवद्-भक्ति !

*

नाविक ! निर्मल कर आचार

रूप दिखा मुझको साकार, बन के आ जा तू अवतार।
हर ले महि का गुरुतर भार, कर के शंखनाद करतार॥
देख भँवर डोली पतवार, बन के माँझी आ मझधार।
कर दे मोह निशा पर वार, झंझावातों का संहार॥
अज्ञान, अविद्या में फुफकार, भरते जान मुझे लाचार।
कर कश्ती के दूर विकार, करूँ ब्रह्म में नित्य विहार॥
देख के कश्ती पै अँधियार, अहा ! सिंधु भी लाया ज्वार।
उत्ताल तरंगों की फटकार, करता धीर अधीर शिकार॥
उत्तुंग शिखर ने दी चित्कार, अरे डूबा क्यों फनकार ?
जगा शक्ति तम का आहार, कर दे पौरुष की किलकार॥
लगा गजब पौरुष हुँकार, तम बादर के डारो फार।
जीवपने का भाव बिसार, जगा ब्रह्म का तेज अपार॥
पास विटप की झुकती डार, करते भीनी-सी पुचकार।
नाविक ! निर्मल कर आचार, वरना जीवन सब बेकार॥

- अशोक सिंह (म. प्र.).

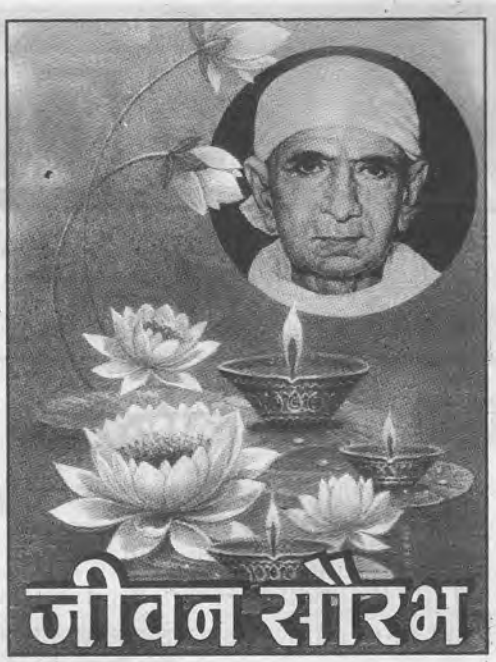

योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

गुरु अर्जुनदेव ने कहा है :

मेरे माधउ जी सत संगति मिले सु तरिआ।
गुरु परसादि परम पदु पाइआ सूके कासट हरिआ॥

'हे प्रियतम ! जिसको सत्संग मिल जाता है वह इस संसार-सागर को तैरकर पार हो जाता है। सूखा वृक्ष पानी मिलते ही हरा होने लगता है, ऐसे ही गुरुप्रसाद मिलने पर परम पद की प्राप्ति हो जाती है।'

तुलसीकृत 'श्रीरामचरितमानस' के बालकाण्ड में भी सत्संग की महिमा गाते हुए कहा गया है :

बिनु सत्संग विवेक न होई।
रामकृपा बिनु सुलभ न सोई॥

इस जीव की उन्नति सत्संग द्वारा ही होती है। सत्संग से ही जीव का स्वभाव बदलता है। सत्संग से मानो, जीव नया जन्म धारण कर लेता है। वह सात्त्विक एवं धार्मिक बन जाता है। कुसंग से जीव को हानि होती है। नीच व्यक्तियों के संग से नीच बना जाता है एवं उत्तम कोटि के महात्माओं के संग से श्रेष्ठ बना जाता है। **जिस प्रकार चींटी गुलाब के फूल का संग करके देवताओं के सिर पर चढ़ जाती है, उसी प्रकार नीच एवं पापी मनुष्य भी महात्माओं का उत्तम संग प्राप्त करके ब्रह्मस्वरूप हो जाता है।''**

पूज्य स्वामीजी ने आगे कहा :

''जिस मनुष्य ने अपने पिछले जन्मों में निष्काम कर्म किये होंगे उन्हीं लोगों को इस जन्म में आत्मा के साथ प्रीति होती है। ऐसे लोग ही नश्वर दुनिया के पदार्थों को तुच्छ समझते हैं। ऐसे वैराग्य से ही हृदय शुद्ध होता है एवं चित्त में शांति मिलती है। वैराग्यवान् शुद्ध चित्तवाले को सद्गुरु उपदेश देकर जगाते हैं एवं जीव को शिवस्वरूप बना देते हैं।

शिवस्वरूप बनने के लिए ईश्वरकृपा, गुरुकृपा एवं आत्मकृपा की आवश्यकता है। ये तीन मिल जायें तो बेड़ा पार हो जाये। उपासना एवं निष्काम कर्म से अंतःकरण शुद्ध हो जाये तो ईश्वरकृपा होती है। सद्गुरुदेव जो उपदेश करते हैं उसका आचरण करने से गुरुकृपा होती है और साधक इसके लिए प्रमादी हुए बिना इस मार्ग पर निरंतर चलने का पुरुषार्थ करेगा तो आत्मकृपा होगी।''

सिक्ख भाई-बहनों पर पूज्य स्वामीजी के सत्संग का खूब प्रभाव पड़ा। पूज्य स्वामीजी ने सत्संग के साथ उन लोगों को आसन एवं यौगिक क्रियाएँ भी सिखाईं।

पूज्य स्वामीजी टीपंग से थोड़े घण्टे अपाह होते हुए केमरान हायलेन्ड्स जो कि मलाया के

पहाड़ों पर स्थित ठंडा क्षेत्र है, वहाँ पधारे। वह जगह समुद्रतल से ५००० फीट की ऊँचाई पर स्थित है। वहाँ दो दिन रहकर क्वालालम्पुर होते हुए, सेराम्बान में दो दिन रहकर पोर्ट डिस्कन में समुद्र तट पर एकांत स्थल पर आकर रहे। वहाँ भी पूज्य स्वामीजी सुबह-शाम भक्तों को ज्ञानामृत की प्यालियाँ पिलाते थे। स्वामीजी वहाँ से मलाका पधारे। यहाँ सिक्खों के गुरुद्वारे में तीन दिन रुके। भक्तों को सत्संग दिया। मलाका के बाद मआर होकर अकलोंग आये। यहाँ उन्होंने लोगों को स्वास्थ्य संबंधी मार्गदर्शन दिया एवं मानव जीवन के उद्देश्य पर सत्संग दिया।

पूज्य स्वामीजी ने कहा : ''मनुष्य शरीर मिलना दुर्लभ है। यह मिला है तो सावधान रहकर आत्मज्ञान पाने के लिए ही प्रयत्न करना चाहिए। फिर कब मनुष्य देह मिलेगी यह निश्चित नहीं है।

अबके बिछुड़े कब मिलेंगे, जाय पड़ेंगे दूर।

बड़े में बड़ा दुःख है जन्म-मृत्यु और बड़े में बड़ा सुख है मुक्ति। अतः मेरे प्यारों ! आज शुद्ध संकल्प करो कि इस जन्म में ही हम मुक्ति प्राप्त करेंगे। दैवी संपदा के गुणों को प्राप्त करने से मुक्ति मिलेगी एवं जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिलेगा।

मनुष्य शरीर, जाति, वर्ण, आश्रम एवं धर्म वगैरह के साथ एकत्व करके उनका अभिमान करने लगता है। उन्हें अपने में मानने लगता है जिसके कारण स्वयं कई बंधनों में बँधकर राग-द्वेष करने लगता है। फलतः उसका मन अशुद्ध होने लगता है। अतः साधक को यह निश्चय एवं संकल्प करना चाहिए कि 'मैं शरीर नहीं हूँ। मुझे मनुष्य शरीर भगवान की कृपा से साधन के रूप में मिला है।' ऐसा निश्चय करके शरीर में सुख की भावना नहीं रखनी चाहिए। उसे अपना नहीं मानना चाहिए। ऐसी भावना से उसका देहाध्यास चला जाएगा।''

(क्रमशः)

प्रेरणास्रोत नारदजी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

संसार में प्रसिद्ध और सभी लोगों के बीच प्रिय होने की चाह प्रत्येक मानव में होती है। वे कौन-से गुण हैं जो मानव की इस स्वाभाविक चाह को पूर्ण करने में समर्थ हैं ? इस संदर्भ में 'महाभारत' के शांतिपर्व में देवर्षि नारद के उत्तम गुणों की चर्चा करते हुए भगवान श्रीकृष्ण और राजा उग्रसेन का संवाद अनुकरणीय है जिसे आचरण में लाकर व्यक्ति सब लोगों का प्रिय और समस्त गुणों से युक्त हो सकता है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

''नारदजी जैसे विद्वान हैं वैसे ही सच्चरित्र भी हैं, किन्तु उनके मन में अपनी सच्चरित्रता का तनिक भी अभिमान नहीं है। इसलिए सर्वत्र उनका आदर होता है। नारदजी में असंतोष, क्रोध, चपलता और भय आदि दुर्गुण नहीं हैं। वे किसी कामना या लोभ के कारण अपनी बात नहीं पलटते, अतः वे सबके पूज्य हैं। अध्यात्मशास्त्र के विद्वान्, क्षमाशील, शक्तिमान, जितेन्द्रिय, सरल और सत्यवादी होने के कारण उनकी सब जगह पूजा होती है। तेज, यश, बुद्धि, ज्ञान, विनय, उत्तम कुल, तपस्या आदि में भी वे सबसे बढ़े हुए हैं।

उनका स्वभाव बहुत अच्छा है। वे सबका आदर करते हैं, पवित्र रहते हैं और अच्छी बातें कहते हैं तथा किसीसे भी ईर्ष्या नहीं रखते। इन्हीं गुणों के कारण उनका सर्वत्र सम्मान होता है। वे सबकी

भलाई करते हैं। उनके मन में जरा भी मल नहीं है। उनकी सहनशक्ति भी बढ़ी हुई है तथा वे सबको समान दृष्टि से देखते हैं इसलिए उनका न कोई प्रिय है न अप्रिय। उन्हें अनेकों शास्त्रों का ज्ञान है और कथा कहने का उनका ढंग भी बड़ा विचित्र है। उनमें पूर्ण पाण्डित्य होने के साथ ही लालसा और शठता का अभाव है। कृपणता, लोभ और क्रोध आदि दोष तो उन्हें छू भी नहीं गये हैं। मुझमें उनकी दृढ़ भक्ति है। उनका हृदय शुद्ध है। वे शास्त्रों के ज्ञाता, दयालु और मोह आदि दोषों से रहित हैं। उनकी बुद्धि में संदेह के लिए स्थान नहीं है। वे बड़े अच्छे वक्ता हैं। उनका मन विषय-भोगों की ओर नहीं जाता। वे कभी अपनी प्रशंसा नहीं करते, ईर्ष्या से दूर रहते हैं और मीठी वाणी बोलते हैं, इसलिए सर्वत्र उनका आदर होता है। वे किसी शास्त्र में दोषदृष्टि नहीं करते, समय को व्यर्थ नहीं गँवाते और अपने मन को वश में रखते हैं। उनकी बुद्धि पवित्र है। उन्हें समाधि से कभी तृप्ति नहीं होती। वे कर्त्तव्यपालन के लिए सदा उद्यत रहते हैं और कभी प्रमाद नहीं करते। लोग उन्हें अपनी भलाई के कामों में सदा लगाये रखते हैं। वे किसी के गुप्त रहस्य को प्रकट नहीं करते। धन मिलने से उन्हें प्रसन्नता नहीं होती और न मिलने से दुःख नहीं होता। उनकी बुद्धि स्थिर और मन आसक्तिरहित है, इसलिए सब जगह के लोग उनकी पूजा करते हैं। वे सम्पूर्ण गुणों से सुशोभित, कार्यकुशल, पवित्र, निरोग, समय का मूल्य समझनेवाले और परम प्रिय आत्मतत्त्व के ज्ञाता हैं। भला उनसे कौन प्रेम नहीं करेगा ?''

वास्तव में, उपर्युक्त सद्गुणों के कारण ही देवर्षि नारद देव, दानव और मानव के बीच प्रिय हैं। उनकी सलाह देव और मानव तो मानते ही हैं, दानव भी मानते हैं। अब नारदजी के इन गुणों को जो मनुष्य सुनेगा, धारण करेगा, आचरण में लाने का प्रयत्न करेगा वह कई अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त करेगा, शांति एवं आनंद प्राप्त करेगा तथा भोग और मोक्ष उसके दास हो जायेंगे। **(महाभारत- शांतिपर्व)**

पूर्वजन्म का वृत्तांत

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

एक राजा के मन में एक बार हुआ : ''मैंने ऐसा कौन-सा पुण्य किया है, जिससे मैं इतना सुखी एवं यशस्वी हूँ ?''

उसने ज्योतिषियों के लिए घोषणा करवा दी :

''जिसको अन्न-धन के भंडार भरने हैं, वह राजा के पूर्वजन्म का यथार्थ वृत्तांत सुनाये। उसे अन्न-धन के लिए फिर कहीं याचना नहीं करनी पड़ेगी। राजा पूर्वजन्म में क्या थे और उन्होंने ऐसा कौन-सा पुण्य किया था जिसकी वजह से वे आज इतने सुखी हैं, यह वृत्तांत राजा जानना चाहते हैं। वे बुद्धिमान हैं एवं शास्त्रों के जानकार हैं। उनके समक्ष कोई गप्प नहीं लगा सकता। अगर किसीने गड़बड़ बताया तो राजा मृत्युदंड देंगे और सच बताया तो अन्न-धन के भंडार मिलेंगे।''

राज्य के ज्योतिषी तो क्या, दूर-दूर के ज्योतिषियों तक खबर पहुँची।

घोषणा सुनकर कोई ऐरा-गैरा ज्योतिषी तो विचार भी नहीं कर सकता था। बड़े-बड़े ज्योतिषियों ने भी हिम्मत नहीं की।

आखिर, थोड़ा-बहुत ज्योतिष जाननेवाले एक गरीब ब्राह्मण ने सोचा : 'क्या करें ? हमारे वश की तो बात नहीं है, किन्तु अपनी गरीबी हमें मिटानी है।' अतः वह राजा के पास गया एवं बोला :

''राजन् ! आप पिछले जन्म में क्या थे, यह मैं न बताऊँ किन्तु किसीके द्वारा आपको इस बात का पता चल जाये- ऐसा प्रयत्न करूँ तो वह इनाम आप किसको देंगे ?''

राजा : ''मुझे किसीके द्वारा भी पता चले, इनाम तुमको दूँगा क्योंकि काम तुम्हारे द्वारा ही करवाया गया होगा।''

वह गरीब ज्योतिषी जंगल में चला गया। उसने लगातार चार दिन तक कुछ भी नहीं खाया-पिया और देवी माँ का रटन करता रहा। अतः गरीब ज्योतिषी के जप-तप से प्रभावित होकर माँ उसके समक्ष प्रगट हुईं। ज्योतिषी ने माँ से पूछा :

''माँ ! राजा पिछले जन्म में क्या थे ? किस पुण्य के बल से वे अभी राजा हैं ? यदि आप यह बता देंगी तो मेरी दरिद्रता दूर हो जायेगी।''

माँ : ''देखो ! राजा की गौशाला में एक सूरदास (अंधा व्यक्ति) रहता है। राजा से कहो कि उसी सूरदास से पूछ ले। वह सब जानता है।''

ब्राह्मण ने आकर राजा को बताया। राजा ने सूरदास से पूछा : ''भाई ! पिछले जन्म में मैं क्या था और किस पुण्य से राजा बना हूँ ? यह तुम जानते हो, अतः बताओ।''

पहले तो वह सूरदास घबराया एवं काँप उठा। फिर बोला : ''राजन् ! आपको यह जानना है तो नगर के बाहर अमुक जगह पर एक पिशाचिनी रहती है, वही आपको बतायेगी।''

राजा गया उस पिशाचिनी के पास एवं बोला :

''पिशाचिनी ! तुम्हीं बताओ कि पिछले जन्म में मैं क्या था एवं किस पुण्य से अभी राजा बना हूँ ?''

पिशाचिनी : ''मैं तुम्हें नहीं बता सकती क्योंकि मैं तुम्हारे पुण्य-तेज से तपकर मर रही हूँ। मैं तुम्हारे सामने प्रगट नहीं हो सकती। तुम मुझे नहीं देख सकते। तुम्हारे जो धर्मात्मा मुख्यमंत्री हैं, उनकी आठ साल की एक कन्या है। वह तुम्हें तुम्हारे पूर्वजन्म का वृत्तांत बता देगी।''

राजा गया अपने निकटवर्ती मंत्री के पास और कहा : ''तुम्हारे घर में कोई कन्या है क्या ?''

''जी हाँ, राजन् !''

''क्या वह आठ साल की है ?''

''जी हाँ महाराज ! लेकिन इस बात का पता आपको कैसे चला ?''

''बस, मुझे पता चला है। किसीको पता न चले इस ढंग से मैं तुम्हारी आठ साल की कन्या से मिलना चाहता हूँ। वह और मैं एक कमरे में बैठकर बातचीत करेंगे।''

मंत्री ने व्यवस्था कर दी एवं खुद दूसरे कमरे में चला गया। उस आठ साल की कन्या से राजा ने पूछा : ''हे कन्या ! मेरे लिये तो तुम देवी के समान हो। मैं तुम्हें जानता तो नहीं था किन्तु बहुत परिश्रम के बाद मुझे तुम्हारे बारे में कुछ पता चला है। बड़े-बड़े ज्योतिषी जो बात नहीं बता सकते, वह तुम बता सकती हो कि मैं पिछले जन्म में क्या था और ऐसा कौन-सा पुण्य किया था, जिसकी वजह से इस जन्म में मैं राजा बना ?''

कन्या : ''राजन् ! पिछले जन्म में आप एक ब्राह्मण थे और अतिथि-भक्त थे। परोपकार की महिमा आप अच्छी तरह से जानते थे। भगवान के नाम का जप भी करते थे और साधु-संगति में आपकी रुचि भी थी, लेकिन आप थे दरिद्र। आप भिक्षा माँगकर खाते थे एवं भजन करते थे।

एक बार ऐसी बरसात हुई कि सात दिन तक आप भिक्षा लेने न जा सके। फलतः उतने दिन तक आप भूखे रहे। आठवें दिन आप भिक्षा माँगकर लाये। वह भिक्षा भी नपी-तुली थी। दो लोग खा सकें- केवल इतनी भिक्षा थी। उससे भोजन बनाकर चार केले के पत्तों पर उसे परोसा गया। इतने में चाण्डाल जैसे अत्यंत कृशकाय दो व्यक्ति आते हुए दिखे। उन्हें देखकर आपकी पत्नी एवं बेटे को हुआ कि 'यह ब्राह्मण तो सारा भोजन उन्हें दे देगा और हम भूखे मरेंगे।' अतः वे दोनों चुपचाप खाना लेकर खिसक गये।

वे दोनों कृशकाय व्यक्ति आपके पास आये तो आपकी बहू ने एवं आपने अपने हिस्से का भोजन उन्हें दे दिया । किन्तु उन्होंने आपकी स्थिति जान ली एवं कहा : ''हम यह सारा नहीं खायेंगे ।''

तत्पश्चात् उन दो हिस्सों में से चार हिस्से हुए । वे दोनों खाकर संतुष्ट होकर चले गये ।

चाहे चाण्डाल हो चाहे ब्राह्मण, सबकी गहराई में तो वही जगन्नियंता परमेश्वर होता है । बल्ब चाहे बाथरूम का हो चाहे पूजाघर का, लेकिन विद्युत तो एक ही पावर हाऊस से आती है । अतः चाण्डाल के चित्त में बैठा अंतर्यामी परमेश्वर संतुष्ट हुआ । आपके पुण्य इतने बढ़े कि उन्हीं पुण्यों के प्रताप से आप अभी राजा हुए हैं । फिर पिछले जन्म में आप धर्म-कर्म करते थे, दान-पुण्य करते थे, साधुसेवी थे, अतः इस जन्म में भी वे संस्कार आपमें पड़े हुए हैं । बुद्धि एवं मन के संस्कार तो मिट जाते हैं, लेकिन 'स्व' में जो संस्कार पड़ते हैं, वे नहीं मिटते ।''

राजा : ''अच्छा... मेरी पूर्वजन्म की पत्नी और बेटा अभी कहाँ हैं ?''

कन्या : ''राजन् ! आपकी पूर्वजन्म की पत्नी ने ही आपको मेरे पास भेजा है । उसने पिछले जन्म में पिशाच जैसा व्यवहार किया था । एक बार दो अतिथियों को आते देखकर पति के सिद्धांत के खिलाफ वह अपना भोजन लेकर घर के अंदर भाग गयी थी, इसलिए इस जन्म में वह पिशाचिनी बनी है । गौशाला में जो अंधा व्यक्ति है, वही आपके पूर्वजन्म का बेटा है ।''

राजा : ''और बहूरानी ?''

कन्या : ''उसके विषय में मैं नहीं बता सकती ।''

राजा समझ गया एवं बोला : ''धन्य है ! तू ही है वह मेरी पूर्वजन्म की बहूरानी ।''

राजा ने मंत्री को बुलाया एवं कहा : ''मंत्री ! यह तुम्हारी तो कन्या है, पर पूर्वजन्म की मेरी बहूरानी है । इसने मेरी 'हाँ- में-'हाँ' भरी थी और अपने हिस्से का भोजन भूखे गरीब के लिए दे दिया था । उसी पुण्य के प्रताप से यह तुम्हारे जैसे धर्मात्मा की बेटी बनी है एवं उसी पुण्य के प्रताप से वह पिछले जन्म की लीला को जानती है ।

मुझे तो भोग-विलास का वातावरण मिला, इसलिए मेरी बुद्धि स्थूल हो गयी और मैं अपना पूर्वजन्म नहीं ज़ान पाया । यह तो अभी कन्या है, भोग-विलास में नहीं पड़ी, इसलिए इसकी मति में पूर्वजन्म की स्मृति बनी हुई है ।''

जो पूर्वजन्म का भी ज्ञान दे देता है, वह चिदानंद चैतन्य सबमें है, लेकिन भोगों में हमारे मन एवं बुद्धि स्थूल हो जाते हैं, अतः हमें उसका पता नहीं चल पाता । किन्तु अगर हम योग की तरफ चलें, ध्यान-धारणा-समाधि आदि करके अपने मन-बुद्धि सूक्ष्म हो जायें तो हमें भी पूर्वजन्म का पता चल सकता है । यही कारण है कि योगी लोग पूर्वजन्म की बातें बता देते हैं ।

मन-बुद्धि सूक्ष्म होते हैं तो चैतन्य के प्रकाश का पता चल जाता है । मति सूक्ष्म होते ही आदमी बड़ा बुद्धिमान हो जाता है । मति सूक्ष्मतर होने से रिद्धि-सिद्धियाँ भी आ सकती हैं और सूक्ष्मतम मति तो परब्रह्म परमात्मा में प्रतिष्ठित हो जाती है । यदि विषयों में आसक्ति हो, पूर्वजन्म के कुसंस्कार हों अथवा मति मंद हो, तो ब्रह्म-परमात्मा का साक्षात्कार करने में देर लगती है । अतः मति को सूक्ष्म करने का प्रयास करना चाहिए । जप, ध्यान, सेवा और प्राणायाम आदि से मति सूक्ष्म होती है । अतः प्रयत्नपूर्वक इन कल्याणकारी उपायों का नित्य सेवन करना चाहिए ।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा । जो सदस्य ७६ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया फरवरी तक अपना नया पता भिजवा दें ।

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

गीता से मठ बना

एक बड़े अलमस्त एवं विरक्त फकीर थे, जो केवल हाथ में ही भोजन कर लेते और कहीं पर पड़े रहते।

हर्ष शोक जाके नहीं, वैरी मीत समान।
कह नानक सुन रे मना, मुक्त ताहि ते जान॥

एक भगत ने उनसे कहा :

''बाबाजी ! आप किसीसे कुछ नहीं लेते। रूपये-पैसे-दक्षिणादि कुछ नहीं लेते तो कोई बात नहीं, लेकिन कम-से-कम ये 'श्रीगीताजी' तो ले लीजिए।''

''अच्छा, ठीक है।''

बाबाजी ने ले ली गीता। जब सोयें तो बगल में लेकर सोयें। बारिश आये तो गीता कहीं भीग न जाये- ऐसा सोचकर उसका बड़ा ख्याल रखने लगे।

फिर कुछ दूसरे भक्तों ने कहा :

''बाबाजी ! छोटा-सा छप्पर तान दें ताकि गीताजी न भीगें और आप भी न भीगें। इसमें क्या जाता है ?''

भक्तों ने छप्पर तान दिया। छप्पर लगाकर कुटिया बन गयी तो चूहे आकर गीता को कुतरने लगे। भक्तों ने कहा :

''बाबाजी ! चूहे आते हैं, एक बिल्ली रख दें तो ?''

''ठीक है।''

बिल्ली भी आ गयी। बिल्ली को दूध चाहिए तो एक गाय रख दी। गाय को संभालने के लिए ग्वाला चाहिए तो एक ग्वाला भी रख दिया। फिर ग्वाले के रहने के लिए कमरा चाहिए तो एक कमरा भी बन गया। फिर ग्वाले की पत्नी आ गयी और उसके बच्चे भी आ गये... ऐसा करते-करते कई दूसरे भक्त आने लगे तो उनके रहने-खाने की सुविधा के लिए भी तो कमरे वगैरह चाहिए। अतः कई कमरे भी बन गये।

जिस भगत ने गीता पकड़ायी थी, वह १०-१२ साल बाद आया और बाबाजी से बोला :

''बाबाजी ! यह सब क्या है ?''

बाबाजी : ''यह तेरी 'गीता रखने में क्या जाता है ?' का विस्तार है। 'इतना कर लिया तो क्या जाता है ? इतना भोग लिया तो क्या जाता है ? इतना रख लिया तो क्या जाता है ?' ऐसा करते-करते मुझ जैसे अवधूत को भी तूने मठाधीश बना दिया।''

कोप करे करतार तब मिले साधु को
धन-धाम और जगत का व्यवहार...

ईश्वर जब रूठता है, तब धन-धाम, मठ-मंदिर और जगत का व्यवहार साधु को पकड़ाता है।

...लेकिन यह बात साधु पर भले लागू हो, जीवन्मुक्त महात्मा पर लागू नहीं होती। जिसने धर्म के तत्त्व को ठीक से जाना है, वह जनक की नाईं राज्य करे तो भी क्या ? शुकदेवजी की नाईं कौपीनधारी रहे तो भी क्या ? श्रीराम की नाईं अयोध्या का सम्राट बनकर जिये तो भी क्या और वशिष्ठजी की नाईं कर्मकाण्डी बना रहे तो भी क्या ?

जिसने परब्रह्म परमात्म-तत्त्व का ठीक से

अनुभव कर लिया, वह समान रूप से मुक्त ही है ।

शुकः त्यागी कृष्णः भोगी जनकराघवनरेन्द्रः ।
वशिष्ठः कर्मनिष्ठश्च सर्वेषां ज्ञानीनां समानमुक्ताः ॥

*

तपस्वी से शिकारी !

एक तपस्वी तप कर रहे थे। उन्होंने इतना तप किया कि इन्द्र घबरा गया :

'तपस्वी कहीं किसीको इन्द्र होने का वरदान न दे दे... मुझसे इन्द्रासन न छीन ले।'

अतः इन्द्र एक शिकारी का रूप धारण कर आये और बोले :

''महाराज ! लीजिए, यह धनुष-बाण रखिए । मैं अभी आता हूँ।''

तपस्वी : ''मैंने ये सब छोड़ दिया है। राज-पाट छोड़कर मैं तपस्वी बना हूँ। अब धनुष-बाण से मुझे क्या लेना-देना ?''

शिकारी : ''महाराज ! आपको लेना-देना नहीं है, फिर भी थोड़ी देर रखिये।''

तपस्वी : ''मैं इसे रखकर झंझट में क्यों पड़ूँ ? तू शिकारी है, मैं तपस्वी हूँ। तेरा-मेरा क्या लेना-देना ? मुझे तप करने दे।''

शिकारी : ''महाराज ! आप तो दयालु हैं, परोपकारी हैं।'' ऐसा करके शिकारी बने इन्द्र ने तपस्वी की वाहवाही की।

तपस्वी : ''अच्छा भाई ! रख दे कोने में।''

इन्द्र का काम बन गया। वे तो नौ-दो ग्यारह हो गये।

तपस्वी रोज ध्यान में बैठते किन्तु वही पुरानी आदत थी, क्षत्रिय थे और धनुष-बाण चलाया हुआ था । अतः उनके मन में ध्यान के समय विचार आता कि : 'धनुष तो बढ़िया है... मजबूत भी है। अपने को क्या ? अपन तो तपस्वी हैं...'

इन्कार भी आमंत्रण देता है। बार-बार धनुष को देखकर मन में विचार आता कि : 'अपन तो तपस्वी हैं।' लेकिन ध्यान में मन नहीं लगा तो हुआ कि : 'चलो, जरा धनुष चलाकर देखें।'

धनुष-बाण का मजा लेते-लेते तपस्वी से शिकारी बन गये और तपस्या छूट गयी।

'इसमें क्या ? इतना-सा करने से क्या जाता है ?' ऐसा करते-करते ही मनुष्य उसमें पूरा फँस जाता है और अपने मुख्य लक्ष्य को भूल जाता है।

अतः मनुष्य को चाहिए कि वह प्रत्येक क्षण सावधान रहे एवं अपने को कभी-भी तुच्छ आदतों का शिकार न बनने दे।

*

सत्संग की आधी घड़ी...

एक ब्रह्मज्ञानी महापुरुष को हर पूर्णिमा के दिन कुछ श्रद्धालु भक्तजन तिलक करके हार पहनाते थे। एक ग्वाला इस दृश्य को कई बार देख चुका था।

एक बार उसके भी मन में हुआ कि : 'चलो, बाबाजी को तिलक करके हार पहना दें।' उसकी जेब में टका पड़ा हुआ था। उस टके (दो पैसे) से उसने एक हार खरीदा एवं बाबाजी को तिलक करके हार चढ़ा दिया। उस ग्वाले को तो पता भी नहीं था कि महात्मा का अर्थ क्या है।

समय पाकर उस ग्वाले की मृत्यु हो गयी। यमपुरी में जब उसका हिसाब-किताब पूछा गया, तब चित्रगुप्त ने कहा :

''यह भोला आदमी था। इसने कोई पाप भी नहीं किया और पुण्य भी नहीं किया।''

यमराज : ''फिर भी देखो, कुछ तो होगा।''

चित्रगुप्त : ''इसने अपने जीवन में केवल दो पैसे का पुण्य किया है। किन्हीं संत-महापुरुष को तिलक करके हार चढ़ाया था । किन्तु संत-महापुरुष को भी संत मानकर नहीं, वरन् लोगों की देखा-देखी हार चढ़ाया था।''

यमराज : ''कितनी देर बैठा उनके पास ?''

चित्रगुप्त : ''दो पैसे का तो हार चढ़ाया एवं दो घड़ी उनके पास बैठा था।''

यमराज : ''ब्रह्मवेत्ता महापुरुष के पास बैठा न ? इसको दो घड़ी के लिए स्वर्ग का राजा बना दो।''

उस ग्वाले को दो घड़ी के लिए इन्द्रासन मिल गया। इन्द्रासन मिलने पर तो खुशी होनी चाहिए किन्तु इससे उसको कोई फर्क नहीं पड़ा। इस ग्वाले का राजतिलक हुआ, अप्सराएँ नृत्य-गान करने लगीं, फिर भी इसके चेहरे पर कोई खुशी नजर नहीं आयी।

यह देखकर किसीने पूछा : ''क्या बात है ? तुम्हें ३३ करोड़ देवताओं का राजा बनाया गया है, फिर भी तुम्हें खुशी नहीं हो रही ?''

ग्वाला : ''दो घड़ी के लिए ही मिला है न ? फिर तो उतार देंगे। दो घड़ी के लिए क्या खुशी मनाना ?''

''यह इन्द्रासन मिला कैसे ?''

''किसी महापुरुष को दो पैसे का हार चढ़ाकर दो घड़ी उनके चरणों में बैठा था, तभी दो घड़ी के लिए इन्द्रासन मिला है।''

''जब दो पैसे के हार से दो घड़ी के लिए इन्द्रासन मिल गया तो अभी तो स्वयं इन्द्रासन पर बैठे हो, जो चाहे लुटा सकते हो।''

इन्द्र बने ग्वाले को मिल गयी युक्ति। अतः उसने मेघों को बुलाया एवं कहा :

''जहाँ ध्यान-भजन करनेवाले महापुरुष निवास करते हैं, ऐसे सागर-तट एवं पर्वतों की गुफाओं आदि के आस-पास हीरे-मोती की बरसात कर दो।''

मेघों ने आज्ञा का पालन किया। कहते हैं कि तभी से सागर में एवं पर्वतों की खानों में हीरे-मोती आदि रत्न मिलते हैं।

दो घड़ी पूरी होने को आयी। इतने में चित्रगुप्त के दूत आये एवं कहने लगे :

''अब तुम सदा के लिए इन्द्र बन गये। तुमने दो घड़ी का उपयोग किया, उपभोग नहीं। इसलिए अब सौ वर्ष तक इन्द्र बने रहोगे।''

इसी प्रकार जो सत्संग की दो घड़ी सँवार लेता है, वह हजारों वर्षों की मन की गुलामी से छूटकर आत्मासन (आत्मपद) पाने में भी कामयाब हो जाता है।

दो घड़ी तो क्या, एक घड़ी बल्कि एक भी नहीं- आधी की आधी घड़ी अर्थात् (चौथाई घड़ी) भी यदि कोई सत्संग करता है, तो उसके करोड़ों जन्मों के पाप-ताप नष्ट होने लगते हैं। इतनी दिव्य है महापुरुषों के संग की महिमा !

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी में पुनि आध।
तुलसी संगत साध की, हरे कोटि अपराध ॥
संत मिले यह सब मिटे, काल जाल जम चोट।
सीस नमावत ढही पड़े, सब पापन की पोट ॥

*

संसार में सच्चा सुख नहीं मिलता

जो आज है वह कल नहीं दिखता।
संसार में सच्चा सुख नहीं मिलता ॥

सोचता हूँ...

जग की परवाह छोड़कर खुद पे डटा रहूँगा।
सब ओर सब स्थितियों में, तुझको देखा करूँगा।
बहुत बार यह सोचा परन्तु कर नहीं पाया ॥
जो आज है वह कल नहीं दिखता...

जानता हूँ समझता हूँ खूब, कि यह सब कुछ विनाशी है।
कई बार धोखा खाया कि मरुस्थल में पानी है।
फिर भी अज्ञान का मैल नहीं छूटता ॥
संसार में सच्चा सुख नहीं मिलता ...

- एक साधक

*

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

न्याय पाने की कला

अन्याय के आगे न्याय को झुकना चाहिए ? इस संदर्भ में अपनी स्थिति और न्यायबुद्धि की जाँच कर लेनी चाहिए। पहले इस बात का पता लगा लेना चाहिए कि आप अपनी बुद्धि से जिसको अन्याय मानते हैं वह भगवान की दृष्टि में, शास्त्र की दृष्टि में अन्याय है या नहीं, क्योंकि जिसके मस्तिष्क में न्याय का जैसा रूप भर दिया जाता है, वह उसी रूप को न्याय मान लेता है, दुराग्रही हो जाता है। जल्दबाजी में निर्णय लेने से आप बदनाम ज्यादा हो जाओगे और न्याय लेने के बदले अपने ऊपर और अन्याय कर बैठोगे। इसलिए यह अति आवश्यक है कि न्याय की सच्ची जानकारी होनी चाहिए। केवल सुनी-सुनायी बात न हो कि कौआ कान ले गया और डंडा लेकर दौड़ पड़े कौवे के पीछे।

अपनी न्यायबुद्धि की जाँच करने के पश्चात् न्याय लेने की रीति भी जान लेनी चाहिए।

कहीं नम्रता से निवेदन करके न्याय पाया जाता है तो कहीं आँख दिखाकर न्याय पाया जाता है। कहीं न्याय प्रेम से मिलता है; कहीं युद्ध करने से मिलता है, कहीं रूठने से मिलता है, कहीं त्याग से मिलता है। कहीं सामनेवाला अपने से कमजोर है तो डाँट-फटकारकर न्याय लिया जाता है कि हम यह अन्याय नहीं होने देंगे। लेकिन सामनेवाला यदि कुप्रचार और षड़यंत्र रचने में कुशल है तो वहाँ प्रचार के साधन से ही आप न्याय पा सकते हैं। वहाँ माला लेकर बैठोगे तो न्याय नहीं मिलेगा।

कहीं धैर्य से न्याय मिलेगा तो कहीं सामनेवाला जो साधन उपयोग में लाता है उससे सवाया साधन उपयोग में लाने पर न्याय मिलेगा। जब सामनेवाला अधिक शक्तिशाली हो तो उसके सामने झुककर न्याय लिया जाता है। आप झुक जाइये, न्याय आपके पक्ष में हो जायेगा। कभी-कभी न्याय लेने के लिए सत्याग्रह भी करना पड़ता है।

जहाँ जिस ढंग से न्याय मिलने की संभावना हो, वहाँ उसी ढंग को अपनाना चाहिए और कभी भी न्यायप्राप्ति के लिए मूर्खता को नहीं स्वीकार करना चाहिए। अपने को मूर्ख बनाना अपने ही ऊपर सबसे बड़ा अन्याय करना होता है।

अवसर के अनुसार न्याय प्राप्त करने में आपको कभी दुःख नहीं होगा। कहीं हँसकर न्याय लीजिए कहीं रोकर, कहीं बोलकर कहीं चुप रहकर। विद्वान् पुरुष अपना काम जैसे बनता है, बना लेता है। ठीक ही कहा गया है :

स्वकार्यं साध्यते विद्वान्।

अपने काम को बिगाड़ना मूर्खता है और न्याय के नाम पर संघर्ष, युद्ध, वैमनस्य मत बढ़ाइये, बल्कि चतुराई के साथ न्याय प्राप्त कीजिए।

बच्चों को देखिए- वे क्या करते हैं ? कभी माता-पिता से मीठी-मीठी बातें करके काम बनवा लेते हैं, कभी रोकर तो कभी रूठकर काम बनवा लेते हैं। यदि माँ काम नहीं बना रही हो तो पिता को पटाते हैं, अन्यथा दादी माँ की गोद में बैठकर अपना मनचाहा काम करवा लेते हैं। ऐसे ही ब्रह्मविद्यारूपी दादी माँ की गोद में बैठकर काम

करवाने की कला शास्त्रों ने दे रखी है। इसलिए ब्रह्मविद्यारूपी दादी माँ की गोद में बैठ जाओ और अपना काम बना लो।

*

सांत्वना

सांत्वना के दो शब्द से मनुष्य को जो संतोष और बल मिलता है, वह विशाल धन-संपदा से भी दुर्लभ है। संसार इसीकी भूख से पीड़ित है। जिस प्रकार भोजन के बाद सौंफ मुखवास का काम करता है, उसी प्रकार संसार के दुःखों से त्रस्त लोगों के लिए आपकी प्रेमयुक्त सहानुभूति उन्हें तरोताजा करने का काम करती है। आप मधुरता और सहानुभूति भरी आँखों से सबको देखो। आपका बहुत-सा दुःख दूर हो जायेगा। आपके संपर्क में आनेवाला भी निर्दुःख होने लगेगा।

जिसके व्यवहार में प्रेमयुक्त सहानुभूति नहीं है, वह मनुष्य जगत में भाररूप है। जिसके हृदय में स्वार्थयुक्त द्वेष है वह तो जगत के लिए अभिशापरूप है। अपने हृदय में विशुद्ध परमात्म-प्रेम को जगाओ, जप-तप व साधना बढ़ाओ और चहुँ ओर उसका प्रवाह बहा दो। आपको अलौकिक सुख-शांति मिलेगी और आपके निमित्त से जगत में भी सुख-शांति की धारा बहने लगेगी।

जो कुछ बोओगे, वही अनंतगुना होकर आपको वापस मिलेगा। बीज के अनुसार ही फल होता है। राग-द्वेष रूपी बबूल के बीज बोकर भला कोई मीठे आम का फल कैसे प्राप्त कर सकता है ? उसे तो वही एक बीज अनंत काँटों के रूप में वापस प्राप्त होगा। इसलिए भलाई के बीज बोओ जिससे भलाई के फलों से आपका जीवनरूपी खेत हरा-भरा हो जाये। वह आपको भी मिलेगा और जगत भी उसे पाकर संतुष्ट होगा। द्वेष और वैर से मनुष्य जगत को नर्क बना देता है लेकिन सहानुभूति और प्रेम से उसे स्वर्ग से भी बढ़कर बना सकता है।

जो केवल अपना ही स्वार्थ देखते हैं और जिनका 'अपना' बहुत ही सीमित होता है, उनसे बहुतों का भला नहीं हो पाता। कुँए के मेढ़क की नाईं उनकी इहलीला समाप्त हो जाती है। इसके विपरीत, जिनका अपना आपा विस्तृत हो गया है, जो सारे जगत में अपनत्व का अनुभव करते हैं, क्षुद्र स्वार्थ के वशीभूत नहीं होते हैं उनके द्वारा जगत का अहित नहीं होता। उनका स्वार्थ ही परमार्थ होता है। विश्व-कल्याण में ही उन्हें अपना कल्याण दिखता है। ऐसा पुरुष जहाँ जाता है, आनंद और शांति उसके पीछे-पीछे चलते हैं और उससे जगत के प्राणियों को भी यथायोग्य आनंद और शांति की प्राप्ति होती है।

दूसरों के हित-अहित का ध्यान न रखकर जो क्षुद्र स्वार्थवश जगत का व्यवहार करता है, शोक और अशांति उसका साथ नहीं छोड़ते हैं। ऐसा व्यक्ति जहाँ भी जाता है वहाँ शोक और अशांति फैलाकर उन्हें और भी बढ़ा देता है। अतः क्षुद्र अहं और हीन स्वार्थ को तिलांजलि देकर जगत का व्यवहार करें। इससे आपका व्यवहार लोगों के लिए प्रेरणास्रोत बन जायेगा। आपका कार्य ही बंदगी हो जायेगा। आपका नाम इतिहास के पन्नों में भले न आये, पर लोगों के दिल में तो आपका राज्य हो जायेगा। दिलबर के स्वरूप में आपकी स्थिति हो जायेगी।

स्वर्ग का साम्राज्य आपके भीतर ही है। पुस्तकों में, मंदिरों में, तीर्थों में, पहाड़ों में, जंगलों में आनन्द की खोज करना व्यर्थ है। खोज करना ही हो तो उस अन्तस्थ आत्मानन्द का खजाना खोल देनेवाले किसी तत्त्ववेत्ता महापुरुष की खोज करो।

त्यागो लापरवाही को...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जो जो करे तू कार्य कर, सब शांत होकर धैर्य से ।
उत्साह से अनुराग से, मन शुद्ध से बल-वीर्य से ॥
जो कार्य हो जिस काल का, कर तू समय पर ही उसे ।
दे मत बिगड़ने कार्य कोई, मूर्खता-आलस्य से ॥

मनुष्य को चाहिए कि वह अपना कार्य तत्परता एवं उत्साह से करे। कभी-भी, किसी-भी कार्य को अपनी मूर्खता, आलस्य अथवा लापरवाही के कारण बिगड़ने न दे।

विद्यार्थी अगर अध्ययन करता हो तो उसे पूरे मनोयोग से अध्ययन करना चाहिए एवं आज का गृहकार्य आज ही पूरा कर लेना चाहिए। यदि वह आज का काम कल पर छोड़ेगा तो उसे कल दुगुना काम करना पड़ेगा। इसी प्रकार वह आलस्य को पोसता रहेगा तो उसे आलस्य करते रहने की आदत पड़ जायेगी। फिर बहुत सारा कार्य एक साथ करना पड़ेगा तो बोलेगा : ''हाय ! नहीं होता है।'' तब शिक्षकों को दोष देगा कि : ''कितना सारा गृहकार्य दे देते हैं !'' फिर सिर कूटते हुए अपना काम निपटायेगा। ये अच्छे विद्यार्थी के लक्षण नहीं हैं।

यदि अच्छा विद्यार्थी बनना हो तो उसकी कुछ कुंजियाँ हैं, जिनका उपयोग करके वैसा बना जा सकता है :

(१) कक्षा में पढ़ाई के समय पूरा ध्यान दें।

(२) जिस दिन जो गृहकार्य दिया जाये, उसे उसी दिन ठीक से पूरा कर लें।

(३) जिस विषय का अभ्यास किया हो, उस-उस विषय का एक-एक प्रश्न हर रोज याद कर लें। इससे साल पूरा होने तक सभी विषयों के प्रश्न ठीक से याद भी हो जायेंगे और अच्छे अंक से उत्तीर्ण होने में कोई तकलीफ नहीं होगी।

जिस वक्त जो करना है वह अगर नहीं करते हैं, आलस्य-प्रमाद करते हैं तो काम बिगड़ जाता है और उसका परिणाम भी बुरा आता है। इसीलिए कहा गया है :

दे ध्यान पूरा कार्य में, मत दूसरे में ध्यान दे।
कर तू नियम से कार्य सब, खाली समय मत जान दे॥
सच जान जो हैं आलसी, निज हानि करते हैं सदा।
करते उन्हीं का संग जो, वे भी दुःखी हों सर्वदा॥

नेपोलियन बोनापार्ट हिम्मती, प्रबुद्ध प्रशासक, दृढ़ निश्चयी और समय-पालन के प्रति चुस्त आग्रही था। मुल्क-पर-मुल्क जीतनेवालों में नेपोलियन का नाम था। वह युद्ध-विद्या में इतना निपुण था कि कैसा भी युद्ध जीत लेना उसके बायें हाथ का खेल था। फिर भी वाटरलू के युद्ध में बुरी तरह हार गया। उसका कारण क्या था ? जरा-सी लापरवाही। नेपोलियन ने जिस किले पर धावा बोलकर उसे जीत लेने की योजना बनायी थी, उसमें वह केवल दस मिनट देर से पहुँचने के कारण हार गया।

वाटरलू के युद्ध में नेपोलियन का सेनापति दस मिनट देर से पहुँचा। उसकी लापरवाही के कारण नेपोलियन को मुँह की खानी पड़ी। इसके बाद उसे अफ्रीका के एक निर्जन द्वीप में स्थित सेंट हेलेना टापू पर कैदी के रूप में रखा गया। अंत में नेपोलियन वहीं पर मर गया।

इतना बड़ा विजेता होते हुए भी समय की जरा-सी लापरवाही के कारण नेपोलियन को युद्ध में मुँह की खानी पड़ी। मनुष्य हो चाहे देवता हो, गंधर्व हो या किन्नर हो, आलस्य का, प्रमाद का,

लापरवाही का फल सभी को भुगतना पड़ता है। इसलिए आलस्य, प्रमाद एवं लापरवाहीरूपी दुर्गुण को अपने जीवन में कभी-भी फटकने नहीं देना चाहिए।

ठीक ही कहा है :

आलस कबहुँ न कीजिए, आलस अरि सम जानि।
आलस से विद्या घटे, बल बुद्धि की हानि॥

सन् १९७२ की घटना है :

अमेरिका को शुक्र ग्रह पर रॉकेट भेजना था। इसके लिए उसने करोड़ों डॉलर खर्च किये थे। किन्तु जब रॉकेट भेजा गया तो वह वापस आया ही नहीं और इस प्रकार उसको करोड़ों डॉलर का नुकसान सहना पड़ा। यही नहीं, अमेरिका को विश्वभर के वैज्ञानिकों के आगे नीचा देखना पड़ा।

इस घटना को लेकर एक जाँच कमीशन बैठाया गया कि करोड़ों डॉलर खर्च किये गये, फिर भी रॉकेट लापता कैसे हो गया ?

जाँच कमीशन द्वारा खूब बारीकी से जाँच करने पर पता चला कि एक छोटी-सी लापरवाही के कारण रॉकेट लापता हो गया। वह गलती क्या थी ? किसी भी रॉकेट को ग्रह पर भेजने से पूर्व 'माइलेज' गिने जाते हैं। 'माइलेज' गिनने में गणित की जरूरत पड़ती है और उसमें धन (+) एवं ऋण (-) के चिह्न होते हैं। धन (+) एवं ऋण (-) का चिह्न तो जरा-सा होता है, किन्तु जब उसे देखने में लापरवाही हो गयी तो करोड़ों डॉलर यानी अरबों रूपये गुड़-गोबर हो गये और इज्जत गयी सो अलग। गलती तो जरा-सी थी, परंतु परिणाम बहुत बुरा भुगतना पड़ा।

जीवन में लापरवाही जैसा और कोई दुश्मन नहीं है। अतः मनुष्य को सदैव इससे सावधान रहना चाहिए।

हर क्षण सावधानी बरतने से जीवन सुखदायी होता है, उन्नत होता है। एक-एक विचार कैसा उठ रहा है, उस पर भी नजर रखो। सावधान होकर बुरे एवं दुर्बल विचारों को काट दो और अच्छे, ऊँचे, बलप्रद एवं सज्जनता के विचारों को बढ़ाओ तथा पोषित करो।

एक-एक कार्य पर सतर्कतापूर्वक निगरानी रखो। 'अमुक कार्य का परिणाम क्या आयेगा ? इसमें दूसरों की हानि तो नहीं होगी ? कहीं समय व्यर्थ तो नहीं चला जायेगा ?' इस प्रकार की सतर्कता से मनुष्य का जीवन अत्यंत उन्नत हो जाता है जबकि जरा-सी लापरवाही करते-करते मनुष्य अत्यंत नीचे आ जाता है। अतः प्रत्येक पल सावधान रहो, सतर्क रहो, लापरवाही का त्याग कर दो। आलस्य-प्रमाद को तिलांजलि दे दो, तो जीवन के हर क्षेत्र में सफल होना आसान हो जायेगा।

*

पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
२८ से ३१ जनवरी '९९	गोधरा (गुजरात)	ध्यान योग शिविर जाहिर सत्संग	रोज शाम ३-३० से ५-३०	संत श्री आसारामजी आश्रम, कनेलाव तालाब के पास, गोधरा।	(०२६७२) ४२२७३, ४१२२८, ४३००५, ४०७३०
१३ से १५ फरवरी '९९	उज्जैन	महाशिवरात्रि शिविर जाहिर सत्संग	रोज शाम ३-३० से ५-३०	संत श्री आसारामजी आश्रम, मंगलनाथ रोड, सांदीपनि आश्रम के पास।	५५५५५२
२५ से २७ फरवरी '९९ २८ फरवरी से २ मार्च '९९	सूरत आश्रम में	विद्यार्थी शिविर होली ध्यान योग शिविर	- -	संत श्री आसारामजी आश्रम, वरियाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत-५.	६८५३४१, ६८७९३६.

पूर्णिमा दर्शन : ३१ जनवरी '९९. गोधरा में। १ मार्च '९९ सूरत आश्रम में।

गौमाता : ऊर्जा का अक्षय स्रोत

[गतांक का शेष]

इस हिसाब से गाय के गोबर से लगभग १६ करोड़ परिवारों को प्रतिवर्ष ईंधन मिल जाता है। चूँकि सभी परिवार मात्र गोबर ही नहीं जलाते, कुछ घास, पत्ती तथा लकड़ी भी जलाते हैं, अतः प्रतिदिन मात्र ५-६ कि. ग्रा. कंडों की ही आवश्यकता पड़ती है और इस तरह मात्र गोबर तथा कृषिजन्य उत्पादों से ३२ करोड़ परिवार को ईंधन मिलता है। इसके अतिरिक्त कुछ गोबर भैंसों से भी मिलता है। इन सभी से प्राप्त गोबर पर भारत की ६० करोड़ से अधिक जनसंख्या आज भी घरेलू ऊर्जा के लिए गाय पर आधारित है। यदि इतनी जनसंख्या गैस, मिट्टी का तेल, बिजली तथा कोयले की माँग करने लगे तो क्या आपूर्ति हो सकती है ? यदि किसी प्रकार आपूर्ति भी हो जाए तो उसकी कितनी कीमत चुकानी पड़ेगी तथा क्या इनकी आपूर्ति निरंतर होती रहेगी ? यदि बिजली की आपूर्ति एक दिन के लिए बन्द हो जाए या पेट्रोलियम पदार्थों की आपूर्ति रुक जाए तो त्राहि-त्राहि मच जाती है परंतु ईंधन की आपूर्ति, कृषि-ऊर्जा तथा बैलगाड़ी के परिवहन के लिए ऊर्जा की आपूर्ति के लिए गाँववालों ने न तो कभी मुँह खोला, न हड़ताल की क्योंकि उनको ऊर्जा गाय से मिलती है, जो कभी न समाप्त होनेवाला अक्षय स्रोत है।

४. बायोगैस : गाय के एक किलो गोबर से ३६ लिटर बायोगैस उत्पन्न हो सकती है। यदि उसमें गोमूत्र भी मिला दिया जाए तो उत्पादन ६५ से ७५ प्रतिशत तक बढ़ जाता है। गोवंशीय पशुओं से प्राप्त ३१.५० लाख टन गोबर से ११,३४० करोड़ लिटर बायोगैस प्रतिदिन उत्पन्न की जा सकती है। इससे पूरे भारत की 'कूकिंग' गैस की आपूर्ति की जा सकती है। 'कूकिंग' गैस के साथ-साथ अच्छी किस्म का खाद भी मिल जाएगा। गोबर से उत्पन्न गैस में अभी तक जो कठिनाइयाँ आई हैं, वे सर्दी के मौसम में कम उत्पादन तथा गैस को दूर तक ले जाने की समस्याएँ हैं। यदि शोध की धारा सर्दियों में किण्वन बढ़ाने तथा गैस के द्रवीकरण की तरफ हो जाए तो मात्र गाय के गोबर से ही 'कूकिंग' गैस तथा खाद की समस्या का समाधान हो सकता है। इससे करोड़ों रूपयों की विदेशी मुद्रा बचेगी, आत्मनिर्भरता बढ़ेगी, ऊर्जा का कभी न समाप्त होनेवाला स्रोत बनेगा तथा पर्यावरण स्वच्छ रहेगा।

५. मनुष्यों के लिए ऊर्जा : भारत का प्रतिवर्ष का दुग्ध उत्पादन लगभग ६४० लाख टन है। इसमें से ४८ प्रतिशत अर्थात् ३०० लाख टन दूध गायों द्वारा उत्पन्न किया जाता है। यह किसी-न-किसी तरह मनुष्य द्वारा ही प्रयोग किया जाता है। शाकाहारी मनुष्यों के लिए ऊर्जा का यह मुख्य स्रोत है। ऊर्जा के रूप में गाय के एक लिटर दूध से ७९४ कि. कैलरी ऊर्जा मिलती है। अतः ३०० लाख टन दुग्ध से २,३८२.१० कि. केलरी ऊर्जा मिलती है। (क्रमशः)

विश्व में बढ़ता जा रहा हृदय रोग, उसके कारण व निवारण के उपाय

- वैद्यराज अमृतभाई

आज विश्व में सबसे घातक कोई रोग तेजी से बढ़ता नजर आ रहा है तो वह है हृदय रोग। पता भी नहीं चलता किस वक्त हृदय की पीड़ा होने से परलोकवास हो जाए।

मनुष्य का हृदय एक मिनट में तकरीबन ७० बार धड़कता है। चौबीस घंटों में १,००,८०० बार। इस तरह हमारा हृदय एक दिन में तकरीबन २,००० गैलन रक्त का 'पम्पिंग' करता है।

हमारा हृदय भगवान के रहने का स्थान है। स्थूल दृष्टि से देखा जाए तो यह माँसपेशियों का बना एक 'पम्प' है। यह मांसपेशियाँ संकुचित होकर रक्त को 'पम्पिंग' करके शरीर के तमाम भागों तक पहुँचाती हैं। हृदय रोग होने का मुख्य कारण है कि हृदय की धमनियों में किसी कारण से रक्त बहना रुक जाने से उसमें कम रक्त पहुँचता है। इससे उनमें चर्बी जमा हो जाती है। इस प्रकार के हृदय रोग का दौरा पड़ना ही अचानक मृत्यु का मुख्य कारण है। हृदय को कार्य करने के लिए ऑक्सीजन की माँग व पूर्ति के बीच असंतुलन होने से हृदय की पीड़ा होना शुरू हो जाता है।

हृदय रोग या हृदय रोग के आक्रमण के समय नीचे लिखे गए लक्षणों से सावधान होकर, ईश्वरचिंतन या जप का अभ्यास शुरू कर दें :

१. छाती में बाँई ओर या छाती के मध्य में तीव्र पीड़ा होना या दबाव-सा लगना, जिसमें कभी पसीना भी आ सकता है और श्वास तेजी से चल सकता है।

२. कभी ऐसा लगे कि छाती को किसीने चारों ओर से बाँध दिया हो।

३. कभी छाती के बाँये या मध्य भाग में दर्द न होकर शरीर के अन्य भागों में दर्द होता है, जैसे कि कंधे में बाँये हाथ में, बाँई ओर गरदन में, नीचे के जबड़े में, कोहनी में या कान के नीचेवाले हिस्से पर।

४. कभी पेट में जलन, भारीपन लगना, उल्टी होना, कमजोरी-सी लगना, ये तमाम लक्षण हृदय रोगियों में देखे जाते हैं।

५. कभी-कभार यह दर्द काम करते समय, चलते समय या भोजनोपरान्त तुरन्त ही शुरू हो जाता है, पर शयन करते ही स्वस्थता आ जाती है। किन्तु हृदय रोग के आक्रमण पर आराम करने से भी लाभ नहीं होता।

६. डायबिटीज के रोगियों को बिना दर्द हुए भी हृदय रोग का आक्रमण हो सकता है।

युवावस्था में हृदय रोग होने का मुख्य कारण धूम्रपान है। धूम्रपान न करने से हृदय रोग की संभावना बहुत कम हो जाती है। फिर भी हाई ब्लडप्रेशर, ज्यादा चरबी, कोलेस्ट्रोल अधिक होना, अति चिन्ता करना और डायबिटीज भी इसके कारण हैं।

आज कल डॉक्टरों, वैज्ञानिकों द्वारा 'हार्ट अटैक' से होनेवाली मृत्यु से रोगी को बचाने का प्रयत्न चल रहा है जिसमें अमेरिकन डॉक्टर डीन ओरनिस का किया गया प्रयोग अमेरिका व ब्रिटेन के लोगों के लिए ध्यानाकर्षक बना है।

इन डॉक्टर का कहना है :

''जहाँ पारम्परिक कई उपायों को आजमाने

से अमेरिका के हृदय रोगियों में से आधे रोगियों का भी बचाव नहीं हो सकता, वहाँ सात्त्विक भोजन, कसरत, आसन एवं ध्यान से 'हार्ट अटैक' का उपचार हो सकता है।''

इस पद्धति के द्वारा हृदय की धमनियों के बीच अवरोधों को दूर किया जा सकता है।

डॉ. ओरनिस के अनुसार हररोज ध्यान में एक घंटा बैठना, श्वासोछ्वास की कसरतें अर्थात् प्राणायाम करना, हररोज आधा घंटा घूमने जाना तथा कम चर्बी बढ़ानेवाले आहार लेना अत्यंत लाभकारी है। इन्होंने एक पुस्तक भी प्रकाशित की है, जिसमें १५० शाकाहारी बनावटों का उल्लेख है।

आज के डॉक्टरों की बात मानने से पूर्व यदि हम भगवान शंकर की, भगवान कृष्ण की बात मान लें और उसके अनुसार जीवन बिताएँ तो हृदय रोग हो ही नहीं सकता।

भगवान शंकर कहते हैं :

नास्ति ध्यानसमं तीर्थम् नास्ति ध्यानसमं यज्ञम्।
नास्ति ध्यानसमं दानम् तस्मात् ध्यानं समाचरेत्॥

भगवान श्रीकृष्ण ने भी भोजन कैसा लेना चाहिए इस बात का वर्णन करते हुए गीता में कहा है :

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

'दुःखों का नाश करनेवाला योग तो यथायोग्य आहार और विहार करनेवाले का तथा कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करनेवाले का और यथायोग्य शयन करने तथा जागनेवाले का ही सिद्ध होता है।' (गीता : ६.१७)

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः॥

'आयु, बुद्धि, बल, आरोग्यता, सुख और प्रीति को बढ़ानेवाले एवं रसयुक्त, चिकने और स्थिर रहनेवाले तथा स्वभाव से ही मन को प्रिय आहार अर्थात् भोजन करने के पदार्थ सात्त्विक पुरुष को प्रिय होते हैं।' (गीता : १७.८)

मंत्रजाप, ध्यान, प्राणायाम, आसन का नियमित रूप से अभ्यास करने तथा ताँबे की तार में रुद्राक्ष डालकर पहनने से अनेक घातक रोगों से बचाव होता है।

हृदय रोग से बचने हेतु रोज भोजन से पूर्व अदरक का रस पीना हितकर है। भोजन के साथ लहसुन-धनिया की चटनी भी हितकर है। कोलेस्ट्रोल कम करने के लिए शहद के साथ आधा ग्राम दालचीनी का सेवन करें।

*

पूज्यश्री की अमृतवाणी पर आधारित आडियो-विडियो कैसेट, कॉम्पेक्ट डिस्क व सत्साहित्य रजिस्टर्ड पोस्ट पार्सल से मँगवाने हेतु

(१) ये वस्तुएँ रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा भेजी जाती हैं।
(२) इनका पूरा मूल्य अग्रिम डी. डी. अथवा मनीऑर्डर से भेजना आवश्यक है।

(A) कैसेट व कॉम्पेक्ट डिस्क का मूल्य इस प्रकार है :

10 आडियो कैसेट	:	मात्र	Rs. 232/-
3 विडियो कैसेट	:	मात्र	Rs. 425/-
5 कॉम्पेक्ट डिस्क (C. D.)	:	मात्र	Rs. 532/-

इसके साथ सत्संग की दो अनमोल पुस्तकें भेंट

★ डी. डी. या मनीऑर्डर भेजने का पता ★
कैसेट विभाग, संत श्री आसारामजी महिला उत्थान आश्रम, साबरमती, अमदावाद-380005.

(B) सत्साहित्य का मूल्य इस प्रकार है :

हिन्दी किताबों का सेट	:	मात्र	Rs. 410/-
गुजराती ''	:	मात्र	Rs. 341/-
अंग्रेजी ''	:	मात्र	Rs. 105/-
मराठी ''	:	मात्र	Rs. 110/-

★ डी. डी. या मनीऑर्डर भेजने का पता ★
श्री योग वेदांत सेवा समिति, सत्साहित्य विभाग, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-380005.

नोट : अपना फोन हो तो फोन नंबर एवं पिन कोड अपने पते में अवश्य लिखें।

पूज्यश्री की कृपा से ब्लड कैन्सर मिटा

सन् १९८० में गुरुपूर्णिमा के पावन पर्व पर मुझे पूज्य सद्गुरुदेव से मंत्रदीक्षा लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सद्गुरुदेव की कृपा से मेरे पुत्र को नया जीवन मिला।

मेरे छः वर्षीय पुत्र विजय को छः महीने से खूब तेज बुखार आ रहा था। डीसा में अनेक डॉक्टरों से इलाज करवाने पर भी जब कोई फर्क नहीं पड़ा, तब उसे एक डॉक्टर की सलाह से ३ सितम्बर '९७ को अमदावाद की सिविल हॉस्पिटल में भर्ती करवाया गया। डॉक्टरों ने जाँच करके रिपोर्ट दिया कि विजय को 'ब्लड कैन्सर' है। यह सुनते ही हम सबके तो मानो होश ही उड़ गये ! क्या करें, क्या न करें ? कुछ समझ में नहीं आ रहा था। विजय लगातार दो महीने से अस्पताल में भर्ती था और दवा भी चालू थी। डॉक्टरों ने कहा कि ३० से ३५ हजार रूपयों का खर्च आयेगा, फिर भी सफलता की कोई गारंटी नहीं है।

इस प्रकार विजय मृत्यु के द्वार पर खड़ा था। मुझे पू. सद्गुरुदेव पर परम श्रद्धा थी कि उनकी कृपा से मेरा पुत्र अच्छा हो जायेगा। दिनांक : २ नवम्बर '९७ के दिन विजय को लेकर मैं पू. बापू के पास गया एवं उन्हें सारी परिस्थिति बता दी।

पूज्य बापू ने अस्पताल की दवाएँ बंद करके, १० ग्राम ताजे दही में पाँच ग्राम तुलसी का रस एवं पाँच बूँद शहद डालकर खिलाने के लिए कहा। यह औषधि खिलाने से पहले एवं खिलाने के बाद एक-एक घंटे तक कुछ भी खिलाने-पिलाने से मना किया। साथ ही 'श्रीगुरुगीता' का पाठ करने के लिए कहा। पू. बापू के निर्देशानुसार हमने लगातार १२ महीने तक निरंतर इस प्रकार चिकित्सा की एवं बड़ बादशाह की मनौती मानी।

अब मेरे पुत्र का ब्लड कैन्सर जैसा भयानक रोग भी आश्चर्यजनक रूप से गायब हो गया है और मेरा पुत्र सभी बीमारियों से मुक्त हो गया है।

- मोहनलाल रामकिशन जियाणी

'गुरुकृपा', श्री लीलाशाह नगर, डीसा (गुज.).

*

गुरुदेव की कृपा से पितरों के दर्शन

मैंने उत्तरायण शिविर जनवरी, १९९७ में अमदावाद आश्रम में पूज्य गुरुदेव से दीक्षा ग्रहण की थी। नियमित रूप से तत्परता एवं उत्साहपूर्वक ध्यान-भजन करने के क्रम में एक दिन मैं **'आनंद मंगल करूँ आरती'** कर रहा था। इतने में भाव में आ गया और ऊपर आकाश की ओर दोनों हाथ करके अपने दादा-दादी (पितरों) को धन्यवाद दे रहा था कि मैं आज धन्य हुआ जो तुम्हारे कुल में पैदा हुआ। इतने में मैंने सफेद प्रकाश में अपने दादा-दादी को देखा। मैंने उनको हाथ जोड़ा तो उन्होंने भी मुझे हाथ जोड़े और कहा : **''वत्स ! तू जो कुछ कर रहा है, वह ठीक है। तू किसी से डर मत। तेरे गुरुकार्य में हम तेरे साथ हैं।''** मेरी आँखों से आँसुओं की धारा चल रही थी। मैंने उन्हें पुनः हाथ जोड़ा तो उन्होंने भी हाथ जोड़ दिये। यह घटना बस कुछ सेकण्डों या मिनटों में ही घटी, लेकिन इससे प्राप्त अनुभवों का मैं पूरा बयान नहीं कर सकता। मेरा रोम-रोम पुलकित हो गया। यह सोचकर मैं धन्य हुआ कि मुझे वशिष्ठ जैसे ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु मिले।

गुरुदेव ! बस, मैं आपका हूँ और आप मेरे हैं। आपके सिवाय मेरा दूसरा कोई नहीं है। आप ही मेरी आत्मा हैं। मेरी स्थिति आपमें हो। आपका स्वरूप सत्य है। आप सत्यस्वरूप सच्चिदानंद हैं।

- प्रवीण डोंगरे

नारायणगाँव, पूना (महा.).

संस्था समाचार

सूरत : दिनांक : २५ से ३० दिसम्बर '९८ तक पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में छः दिवसीय ध्यान योग शिविर का आयोजन हुआ जिसमें अंतिम ३ दिन विद्यार्थियों के लिए था।

ईसाई मिशनरियों के छलावे में आकर ईसाई बने १२७ आदिवासी पूज्य बापू के समक्ष पश्चात्ताप करते हुए पुनः सनातन संस्कृति को अंगीकार कर प्रसन्नता से झूम उठे जिसके फोटो सहित समाचार सूरत के विभिन्न अखबारों में प्रकाशित हुए थे।

सर्वविदित है कि दक्षिण गुजरात के आदिवासी क्षेत्रों में ईसाई मिशनरियाँ भोले-भाले गरीब आदिवासियों का धर्मपरिवर्तन कर रही हैं।

महान् भारत की कल्पना को साकार करने के विचार को जाहिर करते हुए संतशिरोमणि पूज्यपाद बापू ने कहा : **''मेरे पास समय का अभाव है, अन्यथा मेरा तो विचार है कि देशभर से कम-से-कम ५०० विद्यार्थियों का इन्टरव्यू लेकर उनके शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था आश्रम में ही कर दें जहाँ शक्तिपात व ध्यानयोग के अभ्यास से उनकी सुषुप्त कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करें। मेरे पास मेरे गुरुदेव का वह खजाना है कि ५०० विद्यार्थियों में से १०० भी निकल आयें तो भारत का ही नहीं, दुनियाँ का नक्शा बदल सकता है।''**

उद्यमी, साहसी, पराक्रमी और बुद्धिमान बनने की प्रेरणा देते हुए, हजारों विद्यार्थियों में आत्मशक्ति विकसित करते हुए योग विद्या के अनुभवनिष्ठ पूज्यश्री ने कहा : **''तुम्हारे जीवन में पुरुषार्थ और संकल्पबल (Will Power) होना चाहिए। एक बार निश्चय करके उस पर लग जाओ और डिगो नहीं तो दुनिया को हिलानेवाले हो सकते हो।''**

ज्ञान, भक्ति और योग के अनेक प्रयोग इस शिविर में कराये गये। योग के अनुभूत प्रयोग और पूज्यश्री की हृदयस्पर्शी अमृतवाणी से लोगों ने आत्मानन्द के सुखमय रसमय महासागर में सराबोर होकर अकृत्रिम सुख का अनुभव किया। यहाँ शांति व आनंद के साम्राज्य में तल्लीन कराते हुए पूज्यश्री ने कहा : **''ज्यों-ज्यों मन शांत होता जायेगा, त्यों-त्यों उसमें परमात्मा का सुख उभरता जायेगा। ज्यों-ज्यों मन अनासक्त होगा, त्यों-त्यों परमात्मप्रेम में पावन होता जायेगा।**

अगर मन पर अपना प्रभाव पड़ा तो वासनाएँ शांत होने लगेंगी और अपने चित्त में परमात्मा से दूरी की जो भ्रान्ति है, वह दूर हो जायेगी। फिर अपने ही मन में परमात्मा का वैभव, आनंद और माधुर्य उभरने लगेगा।

व्यक्ति शत्रु का दोष बड़ी तत्परता से खोज निकालता है। ऐसे ही अपनी कमजोरियाँ खोज निकाले तो वह महापुरुष बन जायेगा।

सुख-दुःख में जो सम रहता है, वह मन का स्वामी होने में सफल हो जाता है।

खबर लेनी है तो अपनी खबर ले लो कि हम कौन हैं ? कहाँ से आये हैं ? अपना स्वरूप क्या है ? यह खबर लेने हेतु ही हमारा जन्म हुआ है।''

भरूच : ३१ दिसम्बर को पूनम दर्शन महोत्सव संपन्न हुआ। देश के कोने-कोने से आए हुए पूनम व्रतधारी साधकों व स्थानीय भक्तों के विशाल जनसमुदाय को ईश्वर की उपासना व उनकी विशेष कृपा का अनुभव करने हेतु अनेक

कुंजियाँ बताते हुए ज्ञान-भक्ति-योग के अनुभवनिष्ठ पूज्यश्री ने कहा : **''जिस प्रकार गंगाजी गाय और शेर दोनों को मधुर जल देती हैं, उनमें भेदभाव नहीं करतीं, उसी प्रकार भगवान की कृपा सब पर समान रूप से होती है। पर उपासना और उनसे प्रीति करके उनकी विशेष कृपा का अनुभव किया जा सकता है।''**

अपने लाड़ले साधकों को जीवन-संग्राम में सफलतापूर्वक आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा देते हुए पूज्यश्री ने कहा : **''सुख-दुःख, अनुकूलता-प्रतिकूलता सदा नहीं रहते। ऐसा कोई माई का लाल नहीं जो सदा सुखी हो और ऐसा कोई इन्सान नहीं जिसे हमेशा दुःख-ही-दुःख हो। सांसारिक परिस्थितियाँ तो आने-जानेवाली हैं। इनसे व्यथित न होकर सभी परिस्थितियों के सिर पर पैर रखते हुए जीवन में आगे बढ़ते रहें।''**

भरूच में इकट्ठी हुई अभूतपूर्व जनमेदनी को संबोधित करते हुए ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापू ने कहा :

''गीता की ईश्वरीय विद्या विधर्मियों के दबाव में नहीं दबने देती। वह सदैव प्रसन्न रहने की युक्ति बताती है जिससे, चाहे कैसी भी परिस्थिति हो, अपने धर्म का पालन करते हुए जीते-जी मुक्ति का अनुभव कर सकते हैं।''

देश में बढ़ते अपराध और दुराचरण के रोकथाम पर राष्ट्रसंत पूज्यपाद बापू ने कहा :

''राष्ट्र का न्यायपीठ किसीके प्रलोभन या दबाव में न आए, तभी देश का भावी उज्ज्वल और सज्जनों की सेवा हो सकती है। भगवान करें कि हमारे न्यायपीठ विश्व में आदरणीय और विश्वेश्वर के प्रेमपात्र होते जायें।''

पादरा : दिनांक : ६ से १० जनवरी '९९ को यहाँ के गोकुलधाम में पाँच दिवसीय गीता भागवत सत्संग समारोह के साथ ही ९ जनवरी को विद्यार्थियों को तेजस्वी-ओजस्वी बनाने के लिए विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर का आयोजन हुआ जिसमें पूज्यश्री द्वारा पादरा एवं वडोदरा जिले से आए हुए हजारों विद्यार्थियों को सद्गुणों के विकास में अवरोधरूप दुर्गुणों-दुर्व्यसनों से मुक्त होकर संयमी, विनयी, उद्यमी और हिम्मतवान बनने का आह्वान किया गया। यादशक्ति बढ़ाने के अनेक यौगिक प्रयोग कराते हुए बच्चों के लाडले पूज्य बापूजी ने कहा : **''प्राणायाम और ध्यान करने से धारणा शक्ति का विकास होता है। शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न और यादशक्ति में आश्चर्यजनक वृद्धि होती है।''**

महान् भारत के निर्माण के लिए महानता के अनेक गुण विकसित करने की कुंजियाँ योगनिष्ठ पूज्यश्री ने राष्ट्र के इन नवनिहालों को बताईं।

सफल व उज्ज्वल जीवन के लिए सरल तथा सचोट ज्ञान व पूज्यश्री का निःस्वार्थ तथा निर्दोष प्रेम पाकर बच्चे आनंद से झूम उठे।

गीता भागवत सत्संग समारोह में उमड़े जन-सैलाब को देखकर 'कुंभ' का स्मरण सहज ही हो रहा था। पाँच दिन तक गोकुलधाम गोकुलपति के गीता ज्ञानामृत से आच्छादित रहा। वडोदरा के पिछले १०० वर्षों के इतिहास में यह पहला अवसर है कि इतनी विशाल संख्या में लोग एकत्रित हुए - ऐसा विज्ञजनों का कहना है। वहाँ के भक्त-समुदाय ने जो शांति, धैर्य और अनुशासन का परिचय दिया, वह प्रशंसनीय है। यहाँ की समिति व साधक परिवार द्वारा अपने शुभ संकल्प के फलीभूत होने की कामना से दो बार श्रीआसारामायण का १०८ बार पाठ किया गया जिसकी पूर्णाहुति ७ जनवरी को विशाल जनसमुदाय को सम्मिलित करते हुए पूज्यश्री के समक्ष पाठ करके की गई। आठ प्रकार के दान में सत्संगदान को श्रेष्ठ धर्म बताते हुए धर्मवेत्ता पूज्य बापू ने कहा :

''अन्नदान, भूमिदान, गौदान, गोरसदान, कन्यादान, विद्यादान, अभयदान, सत्संगदान- इन आठ प्रकार के दान में सत्संगदान श्रेष्ठ है। इसमें सहभागी होनेवाले साधक की साधना व

भक्त की भक्ति पुष्ट होती है। कपटी का कपट व पापी का पाप नष्ट हो जाता है।''

भारतवर्ष की सहिष्णुता और व्यापकता का जिक्र करते हुए राष्ट्रसंत पूज्यपाद बापू ने विदेशी ताकतों के षड्यंत्र और भारत के पतन के लिए उनके द्वारा अपनाये जानेवाले हथकंडों से सावधान किया।

*

नव वर्ष पर एक ओर 'फाईव स्टार' संस्कृति एवं दूसरी ओर हरिनाम संकीर्तन

नई दिल्ली : नूतन वर्ष की शुरुआत के उपलक्ष्य में ३१ दिसम्बर की रात्रि को जहाँ भौतिकवाद की चकाचौंध में बड़े-बड़े होटल, रेस्तराँ, क्लबों में जीवनशक्ति का ह्रास करनेवाले डिस्को डांस, शराब-कबाब का आयोजन हुआ वहीं दूसरी ओर यहाँ की समिति द्वारा उत्तरीय क्षेत्र स्थित प्रशान्त विहार में रात्रि ८ से १२ बजे तक तन-मन को पावन करनेवाले हरिनाम संकीर्तन का आयोजन किया गया।

कंबल-वितरण

नई दिल्ली : दिनांक : ६ से ८ जनवरी को कड़ाके की ठंड से प्रभावित गरीब-असहाय लोगों के लिए एक विशेष अभियान चलाकर कंबल वितरण किया गया। आश्रम के साधकगण गाड़ियों में कंबल भरकर रात में अलग-अलग क्षेत्रों में निकल जाते थे और जहाँ भी फुटपाथ, भूमिगत पथ, अस्पतालों तथा अनाथालयों के आसपास विकट ठंड से ठिठुरते सोये या बैठे हुए जो लोग दिखाई देते, उन्हें कंबल से ढक देते थे। इन दो दिनों में कालकाजी, आर. के. पुरम, निजामुद्दीन, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, सफदरजंग अस्पताल, बदरपुर, जनकपुरी, पटेलनगर, रोहिणी, करोलबाग, मोतीनगर, रघुवीर नगर, ख्याला, तिलकनगर आदि क्षेत्रों में लगभग ५ लाख रूपयों के कंबलों का वितरण किया गया। दिल्ली के लगभग सभी अखबारों ने आश्रम के इस सेवाकार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

*

मानव जागृति अभियान यात्रा

प्रकाशा (महा.) : श्री यो. वे. से. समिति, महाराष्ट्र व संत श्री आसारामजी आश्रम, प्रकाशा के संयुक्त तत्त्वावधान में ११ दिवसीय 'मानव जागृति अभियान यात्रा' का आयोजन हुआ। यह अभियान यात्रा प्रकाशा आश्रम से प्रारंभ होकर अहमदनगर, पूना, सतारा, कोल्हापुर, कणकवली, माणगाँव, वेंगुर्ला, सांदनवाड़ी, मालवण, रत्नागिरि, देवगढ़, अलिबाग में **'ऋषि प्रसाद'**, सत्साहित्य का वितरण एवं संकीर्तन यात्रा करतें हुए मुम्बई में सम्पन्न हुई। यात्रा के दौरान विडियो प्रोजेक्टर द्वारा पूज्यश्री का सत्संग हर जगह दिखाया गया तथा समिति द्वारा **'लोक कल्याण सेतु'** की प्रतियाँ वितरित की गईं।

अमदावाद : १४ से १७ जनवरी '९९ तक उत्तरायण के प्रेरणादायी पर्व पर वेदांत शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ। १२-१२ वर्ष की मनमानी साधना से जो उपलब्धि कठिन है वह उपलब्धि इन चार दिनों में पाकर गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, दिल्ली, उड़ीसा आदि दूर-सुदूर क्षेत्रों तथा अमेरिका, हाँगकाँग व अन्य देशों के साधकों ने धन्यता का अनुभव किया। जिस प्रकार हाथी के चलने पर उस पर बैठे चींटी आदि विभिन्न जीवों की यात्रा बिना परिश्रम के होती है उसी प्रकार ध्यान योग शिविर के साधनारूपी हाथी पर सवार साधकवृन्द की आध्यात्मिक यात्रा बिना परिश्रम के सहज ही हो रही थी।

संक्रांति तो हर माह होती है किन्तु सूर्य जब मकर राशि में आता है तो मकर संक्रांति होती है। मकर संक्रांति अर्थात् सम्यक् क्रांति। एक-दूसरे की टांग खींचकर, जातिवाद का जहर घोलकर

की जानेवाली क्रांति नहीं किन्तु सम्यक् क्रांति। भीष्म पितामह के महाप्रयाण दिवस मकर संक्रांति पर पूज्यश्री ने सविस्तार प्रकाश डाला। मकर संक्रांति को अंधकार पर प्रकाश का विजय बताते हुए वेदान्त के मर्मज्ञ पूज्यपाद बापू ने कहा :

''इस दिन से रात का छोटा होना और दिन का बड़ा होना प्रारम्भ होता है। मनुष्य को भी अपने जीवन से अज्ञानरूपी रात्रि को निकालते हुए आत्मज्ञान का प्रकाश करना चाहिए। मानव जीवन में व्याप्त राग-द्वेष, अज्ञान, कुसंस्कार आदि अंधकार के द्योतक हैं। मनुष्य के जीवन में सम्यक् क्रांति तभी आ सकती है कि जब वह अज्ञान पर ज्ञान से तथा कुसंस्कारों पर शुभ संस्कारों से विजय प्राप्त करे।''

कर्म की गति को गहन बताते हुए ब्रह्मनिष्ठ पूज्यश्री ने कहा : **''कर्म के तत्त्व को जानो तो इसी जन्म में परमात्मा को पा सकते हो। करने की शक्ति का सदुपयोग करने से आपका जीवन कर्मयोग हो जायेगा। मानने की शक्ति का सदुपयोग करने से भक्तियोग और जानने की शक्ति का सदुपयोग करने से ज्ञानयोग हो जायेगा।''**

१८ से २० जनवरी के दौरान विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर का आयोजन हुआ जिसमें गुजरात के विभिन्न विद्यालयों के अलावा महाराष्ट्र, राजस्थान, दिल्ली, मध्य प्रदेश आदि अन्यान्य प्रान्तों के विद्यार्थियों ने तेजस्वी जीवन की अनेक यौगिक कुंजियाँ पूज्यश्री की अनुभवसंपन्न वाणी व प्रयोग से प्राप्त कर तदनुसार अपना जीवन बनाने का संकल्प किया। प्राचीन गुरुकुल परंपरा की याद दिलाते हुए इस शिविर में प्रेम और अनुशासन का अनुपम संगम देखने को मिला। अनेक युक्तियों से विद्यार्थियों में साहस, प्रसन्नता, नम्रता और पुरुषार्थ जैसे दैवी गुण भरते हुए पूज्य बापू ने कहा : **''जहाँ अनुशासन है, प्रेम नहीं है वहाँ विद्रोह होता है और जहाँ प्रेम है, अनुशासन नहीं है तो ममता हो जाती है। विद्यार्थियों के समुचित विकास में दोनों ही बाधक हैं। अनुशासन और प्रेम का सम्यक् उपयोग ही उनके विकास का मूल है।''**

अन्तिम दिन गुरुकुल व सत्पुरुषों के सान्निध्य को अमोघ बताते हुए पूज्यपाद बापू ने कहा : **''गुरुकुल में रहना व्यर्थ नहीं जाता। वह जीवन को महान् बनाता है। हम भी गुरुकुल में रहते थे। यहाँ से प्राप्त संस्कार तुम्हारे जीवन को गुलाब की तरह महका सकते हैं। उन्हें आचरण में लाकर तुम भी राष्ट्र का प्रमुख व्यक्ति व महान् व्यक्तित्व के धनी बन सकते हो।''**

उल्लेखनीय है कि इन शुभ संस्कारों के सिंचन तथा शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास के लिए देश के दूर-सुदूर क्षेत्रों से विद्यार्थीगण छुट्टी के दिन में यहाँ अनुष्ठान हेतु आया करते हैं। उनके बहुमुखी विकास के लिए उपयुक्त वातावरण व आध्यात्मिक स्पन्दनों से युक्त इस तपस्थली से शिक्षित विद्यार्थी निश्चय ही देर-सबेर महान् विभूति होकर राष्ट्र व माता-पिता का गौरव बनेंगे, इसमें कोई संशय नहीं है।

भंडारा : गुजरात के जामखेड़ी घाट और जेशिंगपुरा में सत्संग व भंडारे का आयोजन हुआ जिसमें हजारों लोगों ने लाभ लिया। गरीबों को कंबल, वस्त्र, बर्तन, दक्षिणा आदि बाँटे गये। विद्यार्थियों को पू. बापू की प्रेरणादायी पुस्तकें 'यौवन सुरक्षा', 'तू गुलाब होकर महक', 'पुरुषार्थ परम देव', 'योगासन' व 'योगयात्रा' भेंटरूप में दी गईं। अलग-अलग ग्रामों में आयोजित इस चार दिवसीय दैवी कार्य में वराछा समिति के साधकगण तन-मन-धन से सहभागी हुए।

पू. बापू के अन्य सत्संग कार्यक्रम : कृपया देखें पृष्ठ नंबर २४ पर

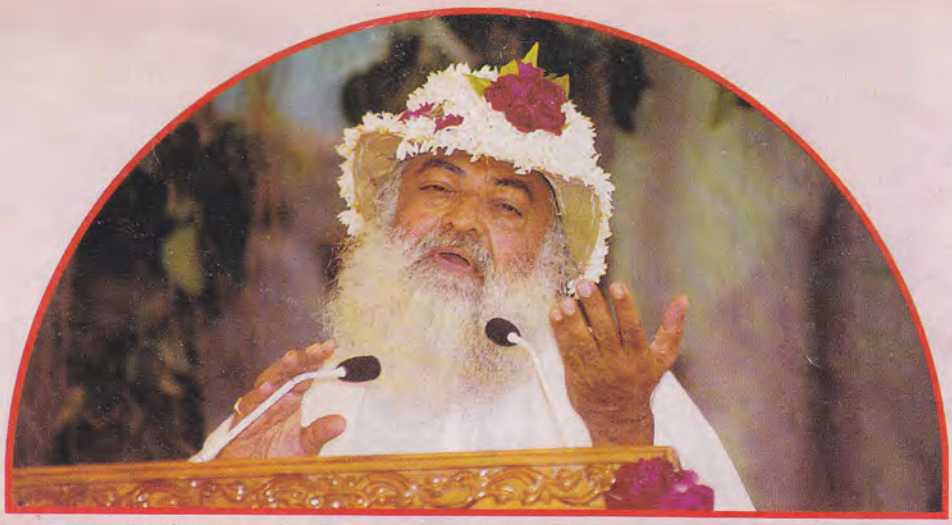

ध्रुव प्रह्लाद की बात बन गयी दृढ़ भक्ति करके । तेरी भी बन जायेगी संयम का पाठ अपनाके ॥

पादरा (गुज.) विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर में देश के भावी कर्णधारों को संयम की महिमा बताते हुए पूज्यश्री ।

पादरा (गुज.) में आयोजित गीता भागवत सत्संग समारोह में उमड़ा हुआ विशाल जनसैलाब ।